हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं के समान तत्व

डॉ. कैलाश चन्द्र भाटिया

लेखक-परिचय

1. नाम : कैलाशचन्द्र भाटिया
2. जन्मतिथि : 2–2–1927
3. पद : पू० प्रोफेसर, हिन्दी तथा प्रादेशिक भाषाएँ, लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी, मसूरी।
4. शैक्षणिक योग्यताएँ : एम० ए० (हिन्दी)—प्रथम श्रेणी; पी-एच० डी० (हिन्दी में अँग्रेजी से आगत शब्दों का भाषातात्त्विक अध्ययन), 1958; डी० लिट्० (हिन्दी में शब्द तथा अक्षर की सीमा), 1964, विश्वविद्यालय में सर्वोत्तम शोध-प्रबंध के के उपलक्ष्य में स्वर्णपदक, 1965; मलयालम भाषा में प्रो० सर्टिफिकेट–प्रथम श्रेणी, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, 1966; लिंग्विस्टिक स्कूल तथा सेमीनार (ग्रीष्म तथा शरदकालीन) दकन कालेज तथा लिंग्विस्टिक सोसायटी के तत्त्वावधान में पूना (ग्रीष्म तथा शरद)—1956, देहरादून–1957, अन्नामलै–1957, आगरा–1960, कुरुक्षेत्र-1964; एफ० आर० ए० एस० (लंदन)।
5. शिक्षण : क० मुं० हिन्दी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ, आगरा विश्वविद्यालय, आगरा (अनुसंधान), 1956-58; बारहसेनी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अलीगढ़, 1958-60; अलीगढ़ मु० विश्वविद्यालय, अलीगढ़, 1960-71; लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी, मसूरी, 1971-1986।
6. प्रकाशित पुस्तकें : 26; शोधपत्र व लेख 250।
7. स्थायी पता : भारती नगर, मैरिस रोड,

अलीगढ़—202001

हिन्दी तथा भारतीय
भाषाओं में
समान तत्त्व

हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं में समान तत्त्व

डॉ० कैलाशचन्द्र भाटिया

प्रथम संस्करण : १९९५
मूल्य : सत्तर रुपये मात्र
प्रकाशक : हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद
मुद्रक : एकेडमी प्रेस, दारागंज, प्रयाग-२११००६

प्रकाशकीय

हिन्दुस्तानी एकेडेमी की 'धीरेन्द्र वर्मा व्याख्यानमाला' के अन्तर्गत सुप्रसिद्ध भाषाशास्त्री डॉ० कैलाशचन्द्र भाटिया का "हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं में समान तत्त्व" शीर्षक व्याख्यान १९ तथा २० जनवरी, १९९० को सम्पन्न हुआ था। डॉ० भाटिया ने अपने व्याख्यान में भारतीय भाषाओं के अन्त:सम्बन्धों को सप्रमाण प्रस्तुत किया है। उनका यह व्याख्यान राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से दिशा-दर्शक है। निश्चय ही डॉ० भाटिया ने अपने व्यापक भाषाशास्त्रीय ज्ञान के सहारे भारत के सांस्कृतिक रिक्थ के परिप्रेक्ष्य में विपुल तथ्यों को सुस्पष्ट रीति से इस व्याख्यान में समाहित किया है।

विश्वास है कि इस सारगर्भित व्याख्यान से विद्वानों एवं अध्येताओं को परितोष होगा।

हरिमोहन मालवीय
सचिव

कुछ अपनी बात

प्रस्तुत सामग्री उस 'भाषणमाला' का पुस्तकाकार रूप है जिसका आयोजन डॉ० धीरेन्द्र वर्मा की स्मृति में कुछ वर्ष पूर्व हिन्दुस्तानी एकेडेमी द्वारा किया गया। 'भाषण-शैली' लिखित सामग्री से भिन्न होती है। तब से अब तक भारत का भाषिक मानचित्र तो वही है, पर स्थितियों में पर्याप्त परिवर्तन हुए हैं; जैसे—संविधान की अष्टम अनुसूची में तीन भाषाएँ—कोंकणी, नेपाली तथा मणिपुरी जुड़ गई हैं जिनकी (यथास्थान उल्लेख न होते हुए भी) चर्चा क्रमशः ६६-६७, ७४-७५ व ७२-७४ पृष्ठों पर की गई है तथा राजभाषा अधिनियम तथा नियमों के कारण द्विभाषिकता की स्थिति से हिन्दी "अनुवाद की भाषा" बनती जा रही है।

भाषाविद् डॉ० धीरेन्द्र वर्मा 'ब्रजभाषा' के मर्मज्ञ विद्वान् थे और भाषण-माला की अध्यक्षता ब्रजप्रेमी सूरदास के अध्येता, साहित्यकार डॉ० व्रजेश्वर वर्मा ने की। अतएव मथुरावासी होने के कारण भाषणमाला का प्रथम भाषण ब्रजभाषा के सार्वदेशिक महत्त्व पर हुआ।

संविधान के अनुच्छेद ३५१ के अनुसार, हिन्दी को भारत की सामासिक संस्कृत के सब तत्त्वों की अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में विभूषित होना है; साथ ही अष्टम अनुसूची में उल्लिखित भारतीय भाषाओं के रूप, शैली और पदावली को आत्मसात् करते हुए जहाँ आवश्यक या वांछनीय हो, वहाँ इसके शब्द-भण्डार के लिए मुख्यतः संस्कृत से तथा गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए विकसित होना है। इससे हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं में समान तत्त्वों की निरन्तर वृद्धि हो रही है।

हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं के मध्य विकसित समान तत्त्व ही राष्ट्रीय एकीकरण की प्रक्रिया को गतिशील बना रहे हैं। अनेक भाषाविद्, विचारक, पत्रकार आदि यह स्वीकार करते हैं कि भारत में हिन्दी बोलने और समझने वालों की संख्या सर्वाधिक है। यह समानता अधिक कारगर हो, इसके लिए भाषासंयोजन की आवश्यकता है जिससे परस्पर संप्रेषणीयता व संचार और

एकीकरण की प्रक्रिया को बल मिले। कंप्यूटर युग में प्रवेश के बाद 'लिपि', 'शब्दमाला', 'जिस्ट' आदि की सहायता से भारतीय भाषाओं में समीपता स्वत: ही बढ़ी है। आज भारतीय भाषाओं को जहाँ देवनागरी में मुद्रित किया जा सकता है, वहाँ एकसाथ सभी भारतीय भाषाओं की लिपियों में मुद्रित किया जा सकता है जिसका नमूना प्रस्तुत पुस्तक के पृष्ठ ११२ पर दिया गया है।

इससे पूर्व सुप्रसिद्ध आलोचक तथा भाषाविद् डॉ० रामविलास शर्मा ने एकेडेमी के तत्त्वावधान में 'आर्य और द्रविड़ भाषा-परिवारों का सम्बन्ध' भाषणमाला दी थी जो प्रकाशित रूप में उपलब्ध है जिसमें निष्कर्ष रूप में कहा गया है कि "अखिल भारतीय संदर्भ में दोनों के सम्बन्ध पहचानने से उनके विकास का सही ज्ञान हो सकता है। यही कारण है कि अमरीकी विद्वान् एमेन्यू और सोवियत विद्वान् आन्द्रोनोव दोनों ही अब **'भारतीय भाषा-परिवार'** की परिकल्पना करते हैं। यह पुस्तक उसका ही अगला चरण है।"

आवश्यकता इस बात की है कि पूर्वस्थापित भाषा-परिवारों की अनदेखी करते हुए तटस्थ भाव से हिन्दी (उपभाषाओं सहित) तथा अन्य भारतीय भाषाओं के पारस्परिक सम्बन्धों पर विस्तार से चर्चा की जाए।

अन्त में, एकेडेमी के अध्यक्ष डॉ० जगदीश गुप्त के प्रति आभार प्रकट करना चाहता हूँ जिन्होंने डॉ० धीरेन्द्र जी की स्मृति में श्रद्धांजलि रूप में भाषणमाला आयोजित कर मुझे यह अवसर प्रदान किया। भाषणमाला के प्रकाशन में श्री मालवीय जी तथा डॉ० रामजी पाण्डेय ने विशेष रुचि ली।

इस लघु प्रयास से यदि इस क्षेत्र में कार्यरत शोधार्थियों को कुछ लाभ हो सका तो लेखक का उद्देश्य सफल होगा।

रामनवमी, दिनांक १ अप्रैल, १९९५

कैलाशचन्द्र भाटिया

नन्दन
भारती नगर, मैरिस रोड
अलीगढ़—२०२००१

अनुक्रम

● ●

[हिन्दी का यह संवर्धन भारत की अप्रतिहत अग्रगामिता से गुँथा हुआ है। हिन्दी और गुजराती से तो हमारे राष्ट्रीय जीवन का ताना-बाना पुरेगा। हिन्दी के विधिवत् प्रयोग से निस्सन्देह गुजराती संस्कृत जैसी अभिव्यंजना-शक्ति, बंगाली का संस्वारित मार्दव तथा तमिल जैसी परिपक्वता प्राप्त करेगी और साथ ही साथ अपनी मौलिक सादगी और लगन को भी बढ़ा सकेगी।]

श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी
(संस्कृत विश्वपरिषद्–१९५५ ई०)

१

हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं में समान तत्त्व

भारत में हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं में समान तत्त्वों की खोज-बीन करने के लिए प्रयाग की विद्वत् मंडली के समक्ष मुझ जैसे अकिंचन व्यक्ति को उपस्थित कर दिया गया।

इससे पूर्व कि मैं मूल विषय को स्पर्श करूँ यह निवेदन करना चाहता हू. कि इस राष्ट्रीय महत्त्व के विषय का प्रतिपादन करने के लिए आपने वृन्दावन से मुझे बुलाया। वृन्दावन ब्रज का पर्याय है। वृन्दावन से लीलामय श्रीकृष्ण जुड़े हुए हैं। मेरा तो कुछ महत्त्व नहीं पर जिस स्थान से मैं आ रहा हूँ उसका भारतीय संदर्भ में महत्त्व है। विष्णुपुराण में वृन्दावन को गोविन्द का आवास कहा गया है। कंबोडिया के एक प्राचीन अभिलेख में उल्लेख मिलता है कि कालिंदी नदी के तट पर बसे हुए उस मथुरा नगर में ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेद की विद्या के अनुसार हजार श्रेष्ठ ब्राह्मणों द्वारा यज्ञों में वेदपाठ होते थे। इसी मथुरा नगर में काले सर्प का मर्दन करने वाले तथा दैत्यकुल का विनाश करने वाले श्रीकृष्ण ने बाललीलाएँ की थीं।

कदम्बमूल आसीनं पीतवासनमद्‌भुतम्,
वनं वृदावनं नाम नवपल्लवमंडितम्।

(मथुरा में नवपल्लवों से पंडित वृन्दावन नाम का प्रसिद्ध वन है। इसमें कदम्ब की डाल पर पीतांबरधारी श्रीकृष्ण विराजमान रहते हैं।)

वृन्दावन की महिमा उत्तरोत्तर बढ़ती गयी। सोलहवीं-सत्रहवीं शताब्दी में तो सुदूर गौड़, कर्णाटक और तैलंग प्रदेश से और श्यामल पंचनद प्रदेश व मरुभूमि मेडता से अनेक संसार त्याग कर वृन्दावनीय रस में अवगाहन करने यहाँ पधारें। श्रीमद्‌भागवत माहात्म्य में एक सुन्दर रूपक मिलता है कि 'एक

बार नारद जी पृथ्वी पर भ्रमण कर रहे थे कि उन्होंने आश्रम, तीर्थ तथा सरिताओं को यवनों से रुद्ध देखा और देवतायतनों को दुष्टों द्वारा नष्टभ्रष्ट। चारों ओर कदाचार का राज्य। यमुना तट पर हरि की लीलास्थली (वृन्दावन) में रुदन करती हुई एक रूपयौवनसंपन्ना बाला को दो मृतप्राय वृद्धों की सेवा करते हुए पाया। परिचय पूछने पर वह बोली—'मैं भक्ति हूँ और ये दोनों मेरे पुत्र ज्ञान और वैराग्य हैं। मैं द्रविड़ देश में उत्पन्न हुई, कर्नाटक में बढ़ी फिर महाराष्ट्र और गुर्जर देश में कुछ जीर्ण हुई। कलि के योग से पाखंडों ने मुझे खंडित कर दिया। वृंदावन में आते ही मैं तो सुरूपिणी नवयौवना बन गयी परन्तु मेरे पुत्र अत्यंत क्लेश में यहाँ पड़े हैं।'[1]

वृन्दावन की महिमा अपरम्पार है। यहाँ उसका विवरण प्रस्तुत करना ध्येय नहीं। मात्र यह कहना चाहता हूँ कि भारतीय ऐक्य के मूल में यही ब्रजभूमि और विशेषतः वृन्दावन है।

जिस वृन्दावन में रहने की लालसा गोवा में रही और जिस वृन्दावन के दर्शनों के लिए श्रीकृष्ण चैतन्य के प्राण व्याकुल रहते थे और जहाँ हित हरिवंश, स्वामी हरिदास तथा हरिराम व्यास जैसे संत निवास करते थे उसकी महिमा का क्या कहना।

'हिन्दी की सामाजिक एवं सांस्कृतिक एकता' की पृष्ठभूमि प्रस्तुत करते हुए डॉ० जगदीश गुप्त ने स्पष्ट पदों में लिखा है—

> 'भागवतकार से कावेरी तटवासी वैष्णवों का जितना आत्मीयतापूर्ण परिचय रहा, उससे कम आत्मीयता वृन्दावन के परिचय की प्रगाढ़ता में नहीं मिलती। इसी वृंदावन से नदिया द्वीप के चैतन्य महाप्रभु जुड़े हुए हैं, जिनके व्यक्तित्व में एक ओर गीतगोविन्द की पदावली और दूसरी ओर चंडीदास और विद्यापति के पद ऐसे अभिन्नरूप से संग्रथित हुए हैं कि उन्हें अलग करना संभव प्रतीत

---

१. उत्पन्ना द्राविड़े साहं वृद्धिं कर्णाटके गता।
क्वचित्क्वचिन्महाराष्ट्रे गुर्जरे जीर्णतां गता।

× × ×

वृन्दावनं पुनः प्राप्य नवीनेव सुरूपिणी।
जाताहं युवती सम्यक् प्रेष्टरूपातु सांप्रतम्।

—माहात्म्य, अध्याय

नहीं होता। गुजरात के नरसी मेहता और सूरदास तथा मीरा का जितना घनिष्ठ सम्बन्ध है उतना साहित्य की सामाजिक चेतना के बिना किसी प्रकार कल्पित नहीं किया जा सकता।

× × ×

दक्षिण के अनेक वैष्णव आचार्यों ने वृन्दावन को अपना केन्द्र बना कर भागवत माहात्म्य की उस वृद्धा भक्ति की कथा को सार्थक कर दिया है जो ज्ञान-वैराग्य रूपी अपने शाश्वत पुत्रों को लेकर द्रविड़ देश में उत्पन्न हुई, कर्नाटक में बढ़ी, गुजरात में बूढ़ी हुई किन्तु वृन्दावन तक आते-आते **"नवीनेव सुरूपिणी** हो गयी।"

(हिन्दी की प्रकृति और विकास, पृष्ठ ६-१०)

इस आधार पत्र की अन्तिम पंक्ति है—

"भारतीय साहित्य की यह बहुआयामी एकता हिन्दी की सामाजिक एवं सांस्कृतिक एकता का मूल आधार है।"

यही संकेत है, सूत्र है भारतीय भाषाओं के मध्य एकता की खोज का। ब्रजप्रदेश की ब्रजभाषा ही वस्तुतः कई शताब्दियों तक सम्पूर्ण भारत को एकता के सूत्र में बाँधे रही। भारत का प्रत्येक निवासी तो न ब्रज में जाकर बस सकता है और न ब्रजभाषा बोल सकता है पर, प्रयत्न जरूर कर सकता है। ब्रजोन्मुख रहने की यही प्रवृत्ति समस्त देश को बाँधे रही और आज भी भारतीय भाषाओं के बीच समान तत्त्वों की खोज की दिशा में यह उपयोगी सिद्ध हो रही है।

ब्रजभाषा और ब्रजबुलि

अवहट्ठ से 'ब्रजबुलि' का प्रारम्भ हुआ। चौदहवीं शताब्दी के आरम्भ में मिथिला क्षेत्र के अन्तिम राजा हरिहर सिंह के मन्त्री श्री उमापति ओझा ने ब्रज में पदावली की रचना की जिनसे करीब सवा सौ वर्षों बाद सबसे प्रसिद्ध कवि विद्यापति का पदार्पण हुआ। १५-१६वीं शताब्दी के संधिकाल में उड़ीसा के रामानन्द राय ने 'जगन्नाथवल्लभ' नामक एक नाटक लिखा जिसमें ब्रजबोली के पद भी हैं। एक पद कृष्णदास कविराज ने चैतन्य चरितामृत में उद्धृत भी किया है। सोलहवीं शताब्दी में (श्री चैतन्य के समय से ही) बंगाल में चंडीदास को ही आदि कवि कहा जाता है। चंडीदास ने तो बंगला में लिखा। 'ब्रजबुलि' का विकास एक साथ असम, बंगाल व उड़ीसा में हुआ। 'ब्रजबोली' या

'ब्रजबुलि' नाम तो आधुनिक काल में दिया गया। किस प्रकार यह शब्द व्यवहृत होने लगा इस सम्बन्ध में अधिकारी विद्वान् डॉ० सुकुमार सेन के अनुसार—

> "सोलहवीं शताब्दी के मध्य भाग में ईश्वरदेव के शिष्य कवि माधवदेव ने वैष्णव पदावली के इस विशिष्ट रूप या वाक्रीति को **'ब्रजावली'** कहा है। (बंगाल में यही 'ब्रजबुली' है।) प्राचीन असमिया शब्द 'सौभाव्ली', 'रूपाव्ली' किसी समय बंगला भाषा में भी प्रचलित थे। लेकिन कुछ समय के पश्चात् ये शब्द बंगला में 'सौभाली', 'रूपाली' हो गये। इसके अनुसार प्राचीन बंगला में 'ब्रजावली' शब्द का रूप 'ब्रजाली' होना उचित था। किन्तु ऐसा नहीं हुआ, या तो 'बोली' शब्द के प्रभाव से अथवा समाक्षर के लोप के कारण। पहले जो 'ब्रजावली बोली' था उसे पीछे 'ब्रजाली बोली' होना उचित था लेकिन हो गया 'ब्रजबोली'। प्राचीन पदकर्त्ताओं ने इस भाषा को 'ब्रजावली' कहा था, इस साधारण कारण के अनुसार कि यही भाषा ब्रज में राधा और कृष्ण की भाषा थी। वे यह भी जानते थे कि ब्रजमंडल में बोली जाने वाली भाषा अर्थात् 'ब्रजभाषा' के साथ इस पदावली की भाषा का मेल है—उच्चारण, छन्द एवं कुछ व्याकरण में भी। वृन्दावन के साथ बंगाल का घनिष्ठ सम्पर्क पीछे हुआ, सोलहवीं शताब्दी के अंत में। खास वृन्दावन की ब्रजभाषा में भी पदरचना आरम्भ हुई किन्तु पद-रचयिताओं ने भी ब्रजबोली को ब्रजभाषा के साथ मिला नहीं दिया, जैसे—
>
> काजर रुचिहर रयनि विशाला
> तजु घर अभिसार करु ब्रजबाला।[1]

अनेक शब्द बंगला के नहीं हैं, जैसे—काजर, रयनि, तजु, थोर। करु, निकसइ, चललिह, तेजल, पेखलि, चलु, मेल आदि क्रियापद बंगला में अचल बन बैठे।

---

१. इसका ही बंगला रूप होगा—

काजलेर रुचिहायी रजनी विशाला
तारपरे सेइकाले अभिसार करे ब्रजबाला।

डॉ० सेन ने यह भी माना कि—

"अवहट्ठ से ब्रजबोली की उत्पत्ति हुई है। बंगला, मैथिली, हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती आदि भाषाओं का पूर्ण परिणत रूप अवहट्ठ के प्रचलित दरबारी साहित्य में था, विशेषकर राधाकृष्ण पदावली में। × × × सूरदास आदि प्राचीन ब्रजभाषा के कवियों की रचनाओं में जो अहिन्दी शब्द या पद हैं वे इसी प्राचीन अवहट्ठ या प्राचीन ब्रजबोली के हैं। इसलिए ब्रजबोली किसी प्रांत विशेष की सम्पत्ति नहीं है, वह आदि भाषा की सम्पत्ति है,[1] और एक प्रकार से **अन्तिम सर्वभारतीय आर्यभाषा है।**"

असम में शंकरदेव (१४४९-१५६८ ई०) और उनके शिष्य माधवदेव ने सोलहवीं शताब्दी में ब्रजबोली में पदावली लिखी। उन्होंने ही पूर्वी भारत मे असम तथा पड़ोसी राज्यों को एकसूत्र में पिरोकर उसे भारतीय संस्कृति की चिन्तनधारा से जोड़ा। उन्होंने रामेश्वरम् से बद्रीनाथ और द्वारिका से पुरी तक बारह वर्षों में यात्राएँ पूरी की। इस यात्रा से उन्हें अखिल भारतीय स्वरूप का ज्ञान ऋषि-महात्माओं से हुआ। उनके द्वारा स्थापित 'सत्रों' (मठों) में तथाकथित छोटी जाति के लोगों को नियुक्त किया गया। प्रत्येक गाँव में नामघर बनवाया जहाँ पर गीत-संगीत, नाटक तथा सामाजिक सांस्कृतिक सभाएँ होती थीं। उन्होंने शास्त्रीय ग्रन्थों के अतिरिक्त अर्धशास्त्रीय शैली में असंख्य भजनों की भी रचना की जिन्हें 'बारगीत' कहा जाता है। उनकी भाषा का रूप द्रष्टव्य है—

एके हरिवंश कथा अमृत साक्षात
अरु भागवत कथामिश्र दिलोलत
दुओ कथा पद बद्धे करिछो मिलाइ
बने मधुमिश्र दुग्धे आदि स्वाद पाइ।

माधवदेव के किसी-किसी पद में हिन्दी की पूरी-पूरी छाप है—

गोबिन्द दीनदयाल स्वामी, तुहूँ मेरि साहब चाकर हामि।
काकु करिये तुया चरणे लागों, अरुन चरणे चाकरि माँगि।

---

१. ब्रजबोली की कहानी—डॉ० सुकुमार सेन, भारतीय साहित्य, जन० १९५६, प्रथमांक पृ० ७७।
इसमें ही उन्होंने मान्यता बदल दी कि—
मैथिली भाषा ब्रजबोली की माँ, बंगला भाषा उसकी धात्री हुई।

तेरी चरणे मेरी परणाम, चाकरि माँगो-नाहि आन काम ।
आपुन करमें जनम जाहाँ होई ताहैं तुय चरणे चाकर रहूँ गौर ।।

माधवदेव ने अनेक नृत्यनाटिका (अंकियानाट) भी लिखीं । इस परम्परा में असमिया में नाट्य साहित्य की खूब रचना हुई । इन धार्मिक एकांकियों की भाषा उस सदी की अनेक भाषाओं का मिश्रित रूप था पर आधार 'ब्रजबोली' ही था । यशोदा के भय से कृष्ण कदम्ब के पेड़ के नीचे सो जाते और कहते हैं—

एक ग्वालिनी माति हामाकू
देलइ बूलि मिठाई
तहेक भोजन करिये शयन करूँ
चेतन हारावलो माई ।

(एक गोपी ने मुझे बुलाकर मिठाई खाने को दी, जिसको खाने के बाद मैं सो गया और अचेत हो गया ।)

सोलहवीं शताब्दी के ही आसाम के कवि गोपाल ने 'जन्मयात्रा' नाटक और रामचरण ठाकुर ने 'कंसवध' लिखा, जिसकी भाषा में ब्रजभाषा का पूरा-पूरा पुट है । इन नाटकों का संकलन तथा उस पर विस्तार से श्री जगदीशचन्द्र माथुर तथा डॉ० दशरथ ओझा ने लिखा है । बंगला के समर्थ कवि और अनुरागवल्ली के रचयिता श्री मनोहरदास ने रसिक कर्णाभरण लीला (सं० १७५४) की रचना की ।[1]

---

१. कुल ३८६ छन्द हैं जिनमें ३७९ रोला, ४ दोहा, १ सोरठा तथा १ छप्पय है । वेगुन कोला से पैदल चलकर आगे एक छन्द का आनन्द लीजिए—

सदा एक रस वास मास छिन छिन नव दरसै ।
सो पावे रसभेद प्रेम जाकें जिय परसै ।।

यह वही मनोहरदास हैं जिन्होंने गुजराती कवि प्रियादास (उनके पट्ट-शिष्य) को नाभादासकृत भक्तमाल की टीका लिखने को प्रेरित किया । प्रियादास ने श्रीरसिक मोहिनी (छन्द सं० १) में मनोहरदास का स्मरण किया—

महाप्रभु चैतन्य हरि रसिक मनोहर नाम ।
सुमिरि चरन अरविन्द वर वरनों महिमा धाम ।।

'भक्तिरस बोधिनी टीका' (क० सं० ७३०) में उल्लेख किया—
जनमन हरि लाल मनोहर नांव पायो,
उनहूँ की मनहरि लीनों ताते राय हैं ।

बंगाल तो ब्रजभाषा-हिन्दी से पूरी तरह जुड़ा रहा। माधवेन्द्रपुरी ने मथुरा के गोकुल मन्दिर में हिन्दी में पढ़ रचना की और गायन किया। मुसलमान कवि अलाउल ने 'पद्मावत' (जायसी) का 'पद्मावती' शीर्षक से बंगला के पयार छंद में भाषान्तर प्रस्तुत किया। गत शताब्दी के प्रारम्भ में फोर्टविलिमय कालेज की कलकत्ता में स्थापना के बाद तो लल्लूजी लाल की नियुक्ति से खड़ी बोली में लिखा जाने लगा, पर आगरा के निवासी होने के कारण ब्रज का प्रभाव स्पष्टतः दिखाई देता है। पत्रकारिता-जगत् में तो कलकत्ता हिन्दी से जुड़ा रहा। हिन्दी का पहला समाचार पत्र ही यहाँ से प्रकाशित हुआ। श्री श्यामसुन्दर सेन ने सन् १८५४ में जो 'समाचार सुधावर्षण' प्रकाशित किया उसमें पर्याप्त सामग्री हिन्दी में रहती थी। सन् १८७५ में केशवचन्द्र सेन ने 'सुलभ समाचार' के माध्यम से लिखा और नागरी लिपि का प्रचार किया। बाद में 'देवनागर विस्तार परिषद्' के संस्थापक जस्टिस शारदाचरण मित्र ने तो स्पष्ट शब्दों में घोषणा की--"उसी दिन मेरा जीवन सफल होगा, जिस दिन मैं सारे भारतवासियों से हिन्दी में वार्तालाप करूँगा।"

इसी प्रकार उड़ीसा में राय रामानन्द पट्टनायक[1] जैसे वैष्णव कवियों ने ब्रजबुली में लिखा। प्रताप रुद्रदेव, चम्पतराय, रामचन्द्रदेव की (सोलहवीं सदी) उड़िया पदावली में ब्रजभाषा—हिन्दी की पर्याप्त छटा मिलती है। यह परम्परा आज तक बनी हुई है। मालबेग की रचना है—

---

१. राय रामानन्द स्वरचित गीत इस प्रकार है जो भैरव राग में गाया जाता है (भैरव रागेन गीयते)

पहलहिं राग नयन भङ्ग भेल।
अनुदिन बाढ़ल अवधि ना गेल॥

ना सो रमण ना हाम रमणी।
दुहुँ मन मनोभव पेशल जानि॥

ए सखी से सब प्रेम काहिनी।
कानु ठामे कहबि बिछुरई जानि॥

ना खोजूँ दूती ना खोजूँ आन।
दुहुँ के मिलन मध्यत पाँच बाण॥
अब सोई विराग तुहुँ भेलि दूती।
सुपुरुष प्रेमक, ऐधन-रीति॥

श्रीराय रामानन्द मिलन प्रसंग में कृष्णादास कविराज—चैतन्य चरितामत,
मध्य खण्ड, अष्टम अध्याय

'जय जय राधे गोपाल गोपांगना रे।'

वृन्दावन शोध संस्थान, वृन्दावन में सुरक्षित ब्रजबुली पदावली साहित्य में सम्बन्धित पूर्ण-अपूर्ण लगभग अस्सी ग्रन्थ हैं।

इन ग्रन्थों में से अधिकतर चैतन्य के परवर्ती युग से सम्बन्धित है। कवियों में उल्लेखनीय हैं—गोविन्ददास, रामशेखर, ज्ञानदास, लोचनदास नयनानन्द, उद्धवदास, कृष्णदास, बलरामदास, वासुदेव घोष, यदुनन्दनदास आदि। अनेक कवियों के पदों के संग्रह भी हैं जिनमें उल्लेखनीय हैं पद संग्रह, पदकल्पतरु, पदामृत समुद्र, पदामृत तरंगिणी पद कीर्तन संग्रह आदि। इन संग्रहों में से कुछ की कई प्रतियाँ हैं। प्राक्चैतन्ययुग के ब्रजबुलि के ग्रन्थों में गुणराज कृत 'कृष्णविजय' और चण्डीदास के काव्य पर आधारित 'पदावली' पूर्ण / अपूर्ण रूप में उपलब्ध है।

ब्रजबुलि पर कई शोध ग्रन्थ आ चुके हैं फिर भी अभी पर्याप्त संभावनाएँ हैं।

उड़िया भाषा-भाषी भी हिन्दी में रचना करते रहे हैं। प्रारम्भ में ब्रजभाषा की छाया रही और अब खड़ी बोली हिन्दी की डॉ० कुन्तल कुमारी देवी ने 'वरमाला'[1] शीर्षक से काव्य संग्रह लिखा जिसको युगपुरुष पं० जवाहर लाल नेहरू को समर्पित किया गया। भूमिका में कवयित्री ने कहा—

> "आज वरमाला लेकर मेरी उत्कल भाषा भूषित लेखनी हिन्दी के घर आई है। दुलहिन की भाँति अपने में कुछ सुन्दरता, मधुरता और भावुकता का लाज ललित श्रृंगार है—देने को।"

---

१. वरमाला—डॉ० कुन्तल कुमारी देवी, भारती तपोवन संघ नई, दिल्ली से प्रकाशित।

इसी कवयित्री को किसी ने कुन्तला और किसी ने कुन्तल कुमारी सावन्त कहा है।

उड़िया कवयित्री डॉ० कुन्तला का हिन्दी प्रेम—डॉ० रमानाथ त्रिपाठी भाषा, मार्च १९८०।

कहीं-कहीं उड़िया के शब्दों का प्रयोग और वह भी व्याकरण सहित प्रयोग भी मिलते हैं, जैसे—

मातिया—मतवाला होकर

इसी प्रकार के प्रयोग जब अन्य भाषाओं से हिन्दी में घुलमिल जायेंगे तो सर्वव्यापी भाषा विकसित होगी।

हृदय का हाहाकार इन पंक्तियों में व्यक्त हुआ है—

दिल का दर्द कहूँ किसको
कोई दर्द सुनने वाला भी हो
आँखों के आसूआ दिखाऊँ किसे,
कोई उसे पोंछने वाला भी हो।

कवयित्री वहुत कम अवस्था में चली गयी। उसी के शब्दों में—

पंखडियों से खुशबू निकल
मीठी हवा में गई घुल।

आवश्यकता इस बात की है कि पूर्वी भारत के राज्यों—असम, मेघालय, मणिपुर, मिजोरम, अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड, त्रिपुरा, बंगाल, उड़ीसा में इन भाषाओं के मातृभाषाभाषी जो हिन्दी में रचना कर रहे हैं उनके साहित्य की भाषा का सम्यक् विश्लेषण किया जाय और देखा जाय कि कितनी क्षेत्रीय भाषाओं की शब्दावली छनकर 'कोश' में सम्मिलित की जा सकती है। यही समान तत्त्वों की खोज की दिशा में सार्थक उद्घोष होगा।

अनुवादों के माध्यम से भी इस प्रकार की शब्दावली की खोज की जा सकती है। एक उदाहरण देकर अपने मन्तव्य को स्पष्ट करना चाहता हूँ। श्रीसत्यनारायण नन्द की कविता 'कोणार्क' का अनुवाद का एक अंश इस प्रकार है—

> "प्रश्नवाची की तरह रथ खड़ा होता सूर्य के सामने वधिनउति से छाया कूद पड़ी सुबह की धूप में कौन है वह, किसी का दाय, सूर्य तनय का तनय माँ का या राजा का, पिता का ?

(अनुवादक—डॉ० सुधांशुकुमार नायक)

शब्द **'दधिनउति'** का अर्थ है मन्दिर के ऊपर का कलशवाला अंश। मन्दिर का यह कलश २५ फुट ऊँचा, ५६००० मन का शिलाखण्ड है जिसको एक सौ मील दूर से लाया गया और दो सौ फुट ऊँचे मन्दिर के शिखर पर स्थापित किया गया। कारीगरों की एकाग्रचित्तता, उनका अविराम श्रम व घर-बार-परिवार, माता-पिता, संतान-संतति सब भूलकर कार्यरत मजदूरों की लगन का मूर्तमान उदाहरण है, यह शिखर। इस शिखर के लिए प्रयुक्त यह शब्द भारतीयता का प्रतीक है जिसको हिन्दी के बृहद्कोश में विस्तृत व्याख्या (मय रेखाचित्र के) के साथ स्थान मिलना चाहिए।

इसी प्रकार उपन्यासों (विशेषतः ज्ञानपीठ पुरस्कार तथा साहित्य अकादमी से सम्मानित) के अनुवादों से भी पर्याप्त शब्दावली, अभिव्यक्तियाँ एकत्र की जा सकती हैं। उदाहरणार्थ उड़िया में लिखा गया गोपीनाथ महन्ति की रचना **'धूलिमाटिर संघ'** को लिया जा सकता है जिसका अनुवाद प्रतिभा राय ने किया है। यह जीवनी ही नहीं, उपन्यास का रूप दे दिया गया है। अत्यन्त प्रभावोत्पादक शैली में उसको प्रस्तुत किया गया है। भारत सरकार इन अनुवादों को भी प्रस्तुत कर रही है और अब भारतीय अनुवाद परिषद्, नयी दिल्ली भी अनुवादकों को पुरस्कृत कर सम्मानित करने लगी है; इस वर्ष (१९८९) प्रयाग के गौरव अमृतराय को पुरस्कृत किया गया और गतवर्ष (१९८८) बच्चन जी को।

प्रश्न मात्र यह है कि इस कार्य का बीड़ा कौन उठाये ?

निश्चित रूप से श्रेष्ठ अनुवादों के माध्यम से भाषा को बहुत उपलब्धि होती है।

सभी भारतीय भाषाओं में समान तत्व आदान-प्रदान से विकसित हुए हैं। आदान-प्रदान व्यक्तियों, विशेषतः संत-महात्माओं, ऋषि-मुनियों के भारत भ्रमण से संभव हुआ। केरल के शंकराचार्य ने उस युग में यात्राएँ सम्पन्न की जब आवागमन के साधन कितने कम थे।

पंजाब के सन्त गुरु नानक ने अनेक स्थानों की तीर्थयात्राएँ की थीं। जहाँ भी वे जाते थे वहाँ के निवासियों को अपनी बात बड़ी आसानी से समझा देते थे। उनकी शैली भी समय, स्थान व श्रोताओं के अनुरूप बदलती रहती थी। चलती मुहावरेवार भाषा का प्रयोग ही इस बात की ओर संकेत करता है कि उन्हें दूसरों की कठिनाइयों का मान था। उनमें साधारणजन की मातृभाषा के

प्रति सच्चा प्रेम था । जिनके विषय में वे अपनी बात कहते थे उनकी भाषा के प्रयोगों तथा मुहावरों को अपनी वाणी में समाहित करते चलते थे । यही कारण है कि उनके द्वारा प्रयुक्त भाषा सहज स्पष्ट सरल तथा बोधगम्य बनती गयी । यह बात दूसरी है कि भाव, विषय तथा पात्रों के साथ ही भाषा का रूप बदलता गया ।

वे पंजाब के होते हुए भी सम्पूर्ण भारत के थे अतएव उन्होंने अपनी भाषा का मूलाधार हिन्दी के पश्चिमी रूप के सर्वाधिक निकट पूर्वी पंजाबी को बनाया जिसमें एक ओर मरता, मिलाइआ; दिखाइया, बिनु तेल दीवा किउ जलै, झूठा इहु संसार, आदि खड़ी बोली के; आपनडे, अभाषणि आदि लहंदा के रूप मिल जाते हैं । फारसी का अधिक ज्ञान न होते हुए भी फारसी निश्चित शब्दावली का और वह भी तद्भव रूप में प्रयोग अधिक मिलता है, जैसे—हका कबीर करीम तू बे ऐब परवरदार । इस प्रकार उन्होंने जनता की बोली को अपना बनाया और यही उनकी सफलता का रहस्य रहा । लोक में जन-जन में समझी जाने वाली लोकोक्तियाँ-सूक्तियाँ—जनमु गवाइया, जिउ गूँगे मिठिआई, सूरज एको रुति अनेक, हीरे जैसे जनमु है कउडी बदले जाइ, बाह पसारि, कलरि खेती बीजीए किउ लाहा पावै, आपि बीजि आपे ही खाई, आदि अनेक उनके काव्य में स्वाभाविक रूप से गुँथी हुई हैं । वह तो एक ऐसे प्रेमी साधक, क्रांतिकारी, स्वतंत्र चिन्तक, समाज सुधारक थे जो अकथ का कथन करते हैं—

ठाडी कथे अकथु सबदि सवारिआ'

उनका काव्य विभिन्न राग-रागिनियों में विशेषत: लोकधुनों में बँधे होने के कारण जन-मानस को स्पन्दित करता है । वे मानते थे कि स्वयंप्रभु ही उनकी वाणी के माध्यम (एवसम की वाणी) से बोलता है । उनकी भाषा सर्वमान्य भाषा थी जिसमें भावों और रागों के बीच अद्भुत समरमता थी जिससे प्रभावोत्पादकता में वृद्धि हुई । आसा राग में ऊषाकाल और शान्त वातावरण का चित्रण है । सन्त-महात्माओं की वाणी में ही अखिल भारतीय भाषा के स्वरूप के दर्शन किये जा सकते हैं ।

मानक से भी पूर्व बाबा फरीद (शेख फरीबुद्दीन गजशंकर) एक महान् सूफ़ी सन्त (११७३-१२६५ ई०) पंजाब में हुए हैं, जिनकी रचनाएँ (१३० दोहे) गुरु ग्रंथ साहब में संकलित हैं । आपकी दृष्टि में भगवान पिया कन्त के रूप में हैं । आप चिश्तिया सम्प्रदाय के तीसरे शेख थे ।

फरीदा सेज बिछाई कंत को किया हम सिंगार ।
सेत कंत न आइया ऐं दे भया विचार ॥

एक और अंश का आनन्द लीजिए—

फरीदा बुरे दा भला करि गुस्सा मनन हठाइ ।
देही रोगु न लगई पलैं समु किछु पाइ !

(बुरे के साथ भी अच्छा व्यवहार करना चाहिए जिससे आत्मा को शांति मिलती है । बुरे के साथ बुरा व्यवहार करने में कोई आंतरिक शांति नहीं मिलती ।)

आज भी पंजाबी के एक नहीं, अनेक हिन्दी के समर्थ लेखक हैं । अनेक हिन्दू सिख हिन्दी के लेखक हैं । देवेन्द्र सत्यार्थी ने लोकगीत के क्षेत्र में जो योगदान दिया वह सर्वविदित है ।

मध्यकाल में तो गुरु गोविन्दसिंह ने समस्त साहित्य ब्रजभाषा में ही लिखा ।

पंजाबी की तरह सिन्धी भी हिन्दी की निकटतम भाषा है । अठारहवीं शती में रोहल सन्त ने हिन्दी में पद रचना की—

"प्रभु जी मैं शरण तुम्हारी आया ।"

(मनप्रबोध)

मुराद फकीर ने इसी समय जिस भाषा का प्रयोग किया उसका रूप हिन्दी के निकट है—

"प्रेम उत्तमते उत्तम अति,
प्रेम की है निर्मल मति ।
प्रेम लखावे अलक अमाप
प्रेम जमावे अजुपा जाप ॥

आज भी अनेक सिन्धी लेखक हिन्दी में लिख रहे हैं, जैसे डॉ० खूबचंदाणी, डॉ० मोतीलाल जोतवाणी आदि ।

महाराष्ट्र तथा गुजरात के अनेक साहित्यकारों ने न केवल अपनी भाषा में वरन् ब्रजभाषा (हिन्दी) में भी साहित्य सर्जन किया ।

महाराष्ट्र के नामदेव, एकनाथ, तुकाराम, केशवस्वामी और अमृतराय ने अपने विचारों को केवल मराठी तक ही सीमित नहीं रखा अपितु उन्हें हिन्दी के माध्यम से व्यक्त कर भारतीय स्तर तक पहुँचाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया ।

इसी प्रकार महानुभाव सम्प्रदाय के प्रवर्तक स्वामी चक्रधर, महदंबा, दामोदर पंडित, ज्ञानेश्वर, गोंदा, सेनानाई, भानुदास आदि ने मराठी के साथ-साथ हिन्दी रचना करने की परम्परा सुस्थिर की। कबीर और सूर की रचनाएँ महाराष्ट्र तक में अत्यन्त लोकप्रिय थीं।

एकनाथ की कविता में ब्रज तथा हिन्दी की अन्य कतिपय बोलियों के शब्द सहजता से मिलते हैं। अरबी-फारसी के शब्दों का तो कहना ही क्या है।

रामनाम जैसे पवित्र नाम का दुरुपयोग ऐसा है जैसे धोवनखाना—

"राम नामबल जो करे पाप
क्याकुं न राखे देव का बाप
रामनाम पर बिख्यों भावे
अमृत बेचि धोवन खावे।"

पूजन-अर्चन

सेना नानक पूजा करता
देव ने धोंकटी लिया देख।

धोंकटी का अर्थ 'हाथ में हथियार रखने की पेटी' है। भगवान भक्त के लिए चाहे जो कार्य करने को तैयार हो जाता है।

भक्ति से परिपूर्ण भावों की अभिव्यंजना के लिए अनुकूल शब्दों का चयन करते हैं। मराठी भाषी एकनाथ को अपनी मातृभाषा में विविध शब्दों की छटाओं की अभिव्यक्ति करना सहज व स्वाभाविक था। उनकी भाषा में संस्कृत, हिन्दी, गुजराती, कन्नड़ भाषा के शब्द प्रयुक्त हुए हैं। संस्कार युक्त समाज के लिए परिनिष्ठित शुद्ध भाषा में भागवत, भावार्थ रामायण, रुक्मिणी स्वयंवर लिखा तो साधारण जनता के लिए ग्रामीण शब्दों से युक्त मिश्रित भाषा में अभंग गाथा, गारुड़, स्फुट रचनाएँ कीं।

उन्होंने समस्त भारत की तीर्थयात्रा की जिससे पता चला कि समस्त भारत में ब्रजभाषा का व्यापक एवं उदार रूप प्रचलित था, अतएव जनता के संपर्क तथा अपनी आवश्यकता के फलस्वरूप ब्रजभाषा को अच्छी तरह अपना लिया। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

'नाशवंत धन नाशवंत मान
नाशवंत स्त्रीपुत्रादि कबालें
नाशवंत बले गलां पउति
एकचि शाश्वत हरी नाम।"

तद्भव शब्दों का प्रयोग भी मिलता है—

खिन खिन घटत आवत **मरन**
अबहुँ न भजो तुम **रामचरन** ।
× × ×
सब ही दिन रात करत है धंदा ।
काहे कहत नहीं राम गोविंदा ॥

इसी प्रकार आस, कारन, गुन, दरसन, छांड़ तुमरो, मीठी, खेती, नेहु, पुन्य, काम, कछु, फाग, हिया, थाल, जोगन, पात, मीठा, घड़ा, सिर, नहावत आदि सहस्रों शब्द यत्र-तत्र बिखरे पड़े हैं ।

संत नामदेव की भाषा[1] ब्रज के निकट है परन्तु एकनाथ की भाषा-ब्रज में अरबी फारसी, दक्खिनी तथा प्रयोगशील तत्सम शब्दों की बहुलता है । हिन्दी के सार्वदेशिक रूप के विस्तार में यह अभूतपूर्व योगदान है । डॉ० कृष्ण दिवाकर के अनुसार 'अंतर्प्रान्तीय व्यवहार की संपर्क भाषा के रूप में हिन्दीतर भाषा भाषियों की यह स्वेच्छया स्वीकृति आज के संदर्भ में भी राष्ट्रीय दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण है ।'

संत नामदेव ने मराठी के जिस रूप को लिया यह भी कितना सरल है—

"पुत्रकलत्रबंधू सांगाती देहाचे
मज बाँधिलें मोहाचे वज्रपाशी ।
संसार करितां देव जै सापडे
तरी का आले वेडे सनकादिक ।

मराठी संतों की इसी परम्परा का निर्वाह संत गुलाबराव ने किया --
(१८८१-१९१५)

---

१. एक पद का आनन्द लिया जा सकता है :

जित देखो उत राम हि रामा ।
जित देखो उत पूरण कामा ॥
तृण तरुवर सातो सागर ।
जित देखो उत मोहन नागर ॥
जल-थल काष्ठ पाषाण अकाशा ।
चन्द्र सुरज नच तेज प्रकाशा ॥

"नंदलाल की मै हूँ रामा
औरन को नित छोर दिया, अब नहिं चाहती सुरधामा"

'कृष्णपंचपदी' में पहला, चौथा, पाँचवाँ; मराठी में और दूसरा, तीसरा भाग हिन्दी में है।

अरबी फारसी के शब्दों से मुक्त (ख्याल, खसम, खैरात, इन्साफ, गम, मयस्सर तमाशा, नूर, साईं, आशक, गाफल, दोअरब, दिल, दिलदार), मराठी-गुजराती (कडियेले, पीक, वेड, फजिती, एक्वीस, माडी) की शब्दावली भी यत्र-तत्र है।

दक्खिनी हिन्दी की शब्दावली का भी व्यापक प्रयोग किया गया है। सोलहवीं शताब्दी में दक्षिण में प्रयुक्त हिन्दी का यह रूप ऐतिहासिक, राष्ट्रीय तथा भाषिक दृष्टि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है जिस पर पृथक्[1] से चर्चा आगे करूँगा।

समर्थ रामदास ने भी भारत के सभी तीर्थों की यात्राएँ की थीं उनका हिन्दी-प्रेम सर्वविदित है। समर्थ गाथा तथा अन्य स्रोतों से उनके हिन्दी पद एकत्रित किये जा सकते हैं।

इस प्रवृत्ति का और अधिक विस्तार गुजरात में मिलता है। गुजरात के भालण[1], अरवो[2], दयाराम[3], दलपत राम[4], ब्रह्मानन्द[5], धीरो आदि साहित्य-कारों के नाम विशेष रूप से लिये जा सकते हैं।

१. पन्द्रहवीं सदी के सुप्रसिद्ध कवि भालण के दशम स्कन्ध में ब्रजभाषा के पद प्राप्त होते हैं। भालण के पद मधुरता तथा सरसता में सूरदास के पदों से कम नहीं।

२. भक्त कवि अखा ने वेदान्त जैसे गंभीर विषय पर काव्य रचना की। उन्होंने सन्तप्रिया और ब्रह्मलीला नामक काव्यों की रचना भी हिन्दी में की।

३. कवि दयाराम ने हिन्दी में चालीस ग्रन्थों की रचना की। जन्म १७६७ ई० में नर्मदा तट पर स्थित चांदोद में हुआ। बीस वर्ष यात्रा में ही व्यतीत किये—श्रीनाथ जी से आरंभ कर बदरिकाश्रम, मथुरा, काशी, द्वारिका, रामेश्वर आदि की यात्राएँ उन्होंने उस युग में भी कर डाली थीं। मराठी-पंजाबी अच्छी जानते थे। 'गरबी' 'गरबो' (सामूहिक गान, अभिनय, नृत्य) के लिए भी आप विख्यात रहे। भारतवर्ष की बारबार

"भडोच के एक वणिक किशनदास कृत 'उपदेश बावनी' (किसन बावनी) सुप्रसिद्ध है । कविजन अपने राजा की प्रशंसा हिन्दी भाषा, चारण भाषा (डिंगल) में ही करते थे। सौराष्ट्र के अनेक राजाओं ने भी ब्रजभाषा में प्रवीणता प्राप्त की। मंदिरों में अनेक कीर्तन भी ब्रजभाषा में ही होते थे। सत्रहवीं शताब्दी के दादूदयाल व उनके शिष्यगण सुन्दरदास, रज्जब जी, जनगोपाल, जगन्नाथ ने 'दादूपंथ' चलाया। अष्टछाप के सुप्रसिद्ध कवि कृष्ण-दास जी, गुजरात के पटेल (पाटीदार) थे। विश्वनाथ जानी ने प्रेम पच्चीसी में सत्रहवाँ पद ब्रजभाषा में लिखा । सामल भट्ट ने 'अंगद विष्टि' में कई संभाषण हिन्दी में ही करवाये हैं। प्रेमानन्द स्वामी (प्रेमसखी) ने सात हजार पद हिन्दी में तो तीन हजार पद गुजराती में बनाये। मनोहरदास के कई पदों की भाषा मीराबाई के समान है। भुज की ब्रजभाषा पाठशाला इस बात की पुष्टि करती है कि कितना अधिक महत्त्व उस युग में ब्रजभाषा का था। कच्छ के ब्रजभाषा प्रेमी महाराव लखपत रचित 'शिवविवाह' (३७३ पदों में) की प्रति राजस्थान के पुरातत्त्व मंदिर, जयपुर के संग्रह में नाहटा जी को प्राप्त हुई।

यात्रा करने से भारत की अनेक भाषाओं/बोलियों के शब्द उनकी ब्रजभाषा में पाये जाते हैं। उनकी 'सतसैया' सर्वश्रेष्ठ रचना रही है। श्री ब्रजरत्न दास ने कवि दयाराम के विषय में लिखा है—

> "ये गुजराती कवि थे, पर भारत भ्रमण से इनकी दृष्टि सार्वदेशिक हो गयी और इनके उद्‌गार राष्ट्रभाषा हिन्दी में काफी निकले जो इन्हें **भारतव्यापी भाषा** ज्ञात हुई। इन्होंने दोहों-छंदों के सिवा गेय पद भी लिखे, चित्रकाव्य रचे तथा रसशास्त्र पर भी कविता की। हिन्दी की मुख्य रचनाएँ सतसैया, वस्तुवृन्द दीपिका तथा श्री मद्‌भागवत् की अनुक्रमणिका हैं।"

> 'प्रवीणसागर' की प्रति गोकुल, मथुरा, वृन्दावन के गोसाई महा-राजाओं और काशी के पंडितों के पास भिजवाई थी।

'**संकर ब्रजभाषा**' की संज्ञा दी गई।

४. दलपत राम ने ब्रजभाषा में कविता लिखी। भुज की पाठशाला में इन्होंने काव्यशास्त्र का अभ्यास किया था। ब्रजभाषा में श्रावणख्यान नामक काव्य लिखा।

५. ब्रह्मानन्द स्वामी ने संप्रदाय प्रदीपा, सुमति प्रकाश, ब्रह्मविलास, उपदेश चिन्तामणि व अनेक पद हिन्दी में लिखे।

डॉ० जगदीश गुप्त तथा डॉ० न० अ० व्यास ने इस दृष्टि से विस्तृत शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किये हैं। कई शताब्दियों तक ब्रजभाषा का प्रचार-प्रसार रहा फलतः अनेक सुप्रसिद्ध कवियों ने ब्रजभाषा हिन्दी में काव्य-रचना की।

ब्रजभाषा का यह सार्वदेशिक महत्त्व ही था जिस कारण सन् १६७५ ई० में मिर्जा खाँ द्वारा 'तुहफन-उल-हिन्द' शीर्षक से शास्त्रीय ग्रन्थ लिखा गया जिसमें 'भाखा' मध्यकालीन ब्रज (हिन्दी) का न केवल व्याकरण लिखा है अपितु उसके उच्चारण एवं देवनागरी लिपि में उसकी लेखन व्यवस्था के नियम दिये गये हैं। संगीत, नृत्य, काव्यशास्त्र, सामुद्रिक शास्त्र जैसे अन्य विषय भी दिये गये हैं।

बाद में दयानन्द सरस्वती, महात्मा गांधी, कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी की हिन्दी सेवा सर्वविदित ही है। गांधी जी ने जिस संत से प्रेरणा ली उसका विशेष रूप से उल्लेख करना चाहता हूँ। काठियावाड़ के जामनगर में जन्मे प्राणनाथ[१] (१६१८ ई०) ने हिन्दू, मुस्लिम, यहूदी, ईसाई, पारसी आदि का गहन अध्ययन कर उनके मौलिक समन्वय की ओर जोर दिया। आपने हिन्दी की विशेष सेवा की। भक्ति सिद्धान्तों पर भक्तगण विचार करेंगे पर भाषिक दृष्टि से उनका सर्वोच्च महत्त्व है। सत्रहवीं शताब्दी में ही हिन्दी के महत्त्व को स्वीकार कर लिया था—

बिना हिसाबै बोलियाँ, **भाषा सकल जहान।**
सबकौ सुगम जानकै, कहूँगो **हिन्दुस्तान॥**

(सब को बोधगम्य सरल जानकर हिन्दी में कहूँगा।)

बड़ी भाषा एही भली, सो सब में जाहिर।
करने पाक सबन को, अंत माँहे बाहेर॥

(यही भाषा सबसे **बड़ी है, सबसे अच्छी है,** यही **सब में व्याप्त हैं।** यही सब को आन्तरिक रूप से और बाह्य रूप से मिलाने वाली (सम्पर्क) भाषा है।)

---

१. प्राणनाथ के साहित्य को प्रकाश में लाने का श्रेय इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्रोफ़ेसर माताबदल जायसवाल को है।

'कीरतन' में संगृहीत पदों की रचना एक समय पर नहीं हुई। रचना भी अनेक स्थानों—दीपबन्दर, टट्टानगर, आबासी बन्दर, जामनगर, सूरत, मेड़वा मंदसौर, हरिद्वार, वृन्दावन, पन्ना एवं चित्रकूट पर हुई। प्राणनाथ जी की भाषा सिंधी तथा प्रादेशिक भाषा गुजराती थी किन्तु हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के विषय में अपूर्व तथा अविस्मरणीय कार्य किया। उत्तर भारत की यात्रा में उनकी वाणी हिन्दी में अवतरित हुई। उन्होंने सर्वप्रथम हिन्दुस्तानी शब्द का प्रयोग किया था। कीरतन की भाषा हिन्दी है जिसमें ब्रज, गुजराती एवं पंजाबी भाषा का पुट है। जनसाधारण की समझ में आने वाली एवं जनसम्पर्कीय भाषा को मान्यता प्रदान की गई। उस युग में उन्होंने हिन्दी को सर्वश्रेष्ठ भाषा स्वीकार किया। हिन्दी को व्यावहारिक महत्ता प्रदान करने का श्रेय प्राणनाथ को है। महामति की वाणी आज भी प्रकाश-स्तम्भ की तरह विद्यमान है। आपकी वाणी का मूल भाव है—

'जो कुछ कह्या कतेब में, सोई कह्या वेद।'

जो धारा नरसी मेहता (१४१३-१४७९ ई०) से प्रारंभ हुई वह आधुनिक काल में सुन्दरम् तक चलती आई है। काका कालेलकर परम्परा को आज तक अनेक साहित्यकारों ने जीवित रखा है।

प्रो० के० का० शास्त्री भी सेतु का कार्य कर रहे हैं। जो प्रयोग मुहावरे गुजराती के हिन्दी में चल सकते हैं उनको अपनाना चाहिए।

सुश्री रेहाना[1] की हिन्दी सेवा सर्वविदित है। महात्मा गांधी ने रेहाना

---

१. सन् १९३२ ई० महात्मा गांधी ने हरिजनों की प्रथा पर २८ दिनों का ऐतिहासिक अनशन जेल में किया।
उन्होंने महात्मा गांधी जी को पत्र लिखा जिसके संबंध में महादेव भाई ने लिखा है—

> "रेहाना का पत्र तो ब्रज की गोपी की याद दिलाने वाला है।" बापू जी जब से मैंने सुना तब से मैं नाच रही हूँ। आपका यह इरादा तो मेरे लिए किरसन जी की बाँसुरी ही है। उसको सुनकर मैं नाचने लगूँ इसमें क्या ताज्जुब? × × ×
> आपकी इस कुरबानी को मैं कुरबानी नहीं समझती बल्कि मुझे तो यह नटराज का नाच ही मालूम है।"

को मीराँ उपनाम दिया। मीराँ ही एकमात्र ऐसी कवयित्री थीं जिन्होंने एक साथ ब्रजभाषा, गुजराती तथा राजस्थानी में लिखा। रेहाना के एक गीत की कुछ पंक्तियों से भाषा को स्वरूप का ज्ञान होता है—

> निज हाथ ले कटारी हृदय चीर-चीर दूँ।
> मैं दुखी दुखी हुआ तो मिला परमानंद धाम ॥
> रेहान जग को छोड़ अरु श्रीहरि को ढूंढ।
> जीवन वह चला रे पीछे क्या बनेगा काम ॥

गांधी जी के प्रचार कार्य से गुजराती-हिन्दी में साम्य को बल मिला है और यही प्रवृत्ति निरन्तर बनी हुई है। ब्रज और द्वारिका श्रीकृष्ण के माध्यम से जुड़े हुए हैं। गुजराती से भी हम बहुत कुछ ले सकते हैं। गुजराती में नाविकों की अपार शब्दावली उपलब्ध है। नाविकों का शब्दावली गुजराती, मराठी, कन्नड़, मलयालम, तमिल, तेलुगु तथा बंगला (तटीय प्रदेशों की भाषा) से हिन्दी को लेनी होगी। कोशकार इसको नहीं गढ़ सकते।

ब्रजभाषा के माध्यम से गुजरात के जुड़े रहने की जो शताब्दियों पुरानी परम्परा है वह अब भी हिन्दी के द्वारा जारी है।

आर्य-द्रविड़ भाषाओं में मूल एकता

दक्षिण के पुराने राज्यों में पाण्ड्य राज्य की राजधानी मथुरा तमिल साहित्य का सुप्रसिद्ध पीठ थी। वस्तुतः मदुरा ही दक्षिण की मथुरा नगरी थी। ब्रज भाषा और ब्रजभाव से जुड़ी हुई आलवार गोदा मनसा वृन्दावन में ही वास करती थी और आज भी वृन्दावन का मन्दिर (रंगास्वामी द्वारा स्थापित होने के कारण रंग जी का मन्दिर) तमिलनाडु और ब्रज प्रदेश को जोड़े हुए है। आजकल का केरल राज्य उन दिनों में चेर राज्य के नाम से प्रसिद्ध था। पश्चिमी घाट के कारण आना-जाना कम हुआ और उस क्षेत्रीय भाषा पर संस्कृत का प्रभाव अत्यधिक पड़ा, फलतः वर्णमाला में अनेक नये वर्ण जोड़ने पड़े। मलयालम और तमिल में अत्यधिक साम्य है। तमिल में आम को 'माँगाय' कहते हैं तो मलयालम में 'माडन'। तमिल में आप 'नींगल' है तो मलयालम 'निङ्ल'। इसी तरह तमिल में मैं को 'नान्' तो मलयालय में 'आन्'। द्रविड़ परिवार के पुराने ग्रन्थों में संस्कृत के कई शब्द हैं। ईसवी की दूसरी शताब्दी में लिखे गए 'तिरुक्कुरल' का पहला पद है—

अहर मुदल् एडुत्तेल्लाम् आदि
बगवन् मुदले आहु ।

उक्त दो पंक्तियों में स्पष्टत: आदि, भगवन शब्द है । इससे सिद्ध होता है कि उस जमाने में भी उत्तर-दक्षिण ही भाषाओं में आदान-प्रदान हुआ करता था । इसी प्रकार संस्कृत भाषा में भी नीर (नीर), मोती (मुक्ता), सोना (स्वर्ण) शब्द थे । मोती आदि तमिल शब्द 'मुत्तू' का दूसरा रूप है । मोती सुदूर दक्षिण के समुद्र में प्रचुरता से मिलता है ।

ऐसा माना जाता है कि महर्षि अगस्त्य हजारों किलोमीटर की लम्बी यात्रा कर दक्षिण के पाण्ड्य राज्य में पहुँचे और दक्षिणी छोर 'पोदिये मलै' स्थान आश्रम स्थापित किया और बड़े-बड़े ग्रन्थों के आधार पर तमिल भाषा का व्याकरण लिखा । माना जाता है कि उसके आधार पर ही उनके शिष्य तुलकाप्पियर ने तुलकाप्पियम[1] नामक प्रामाणिक व्याकरण की रचना की । आज के युग के महाकवि सुब्रुह्मण्य भारती ने मातृभूमि कविता में कहा है--

इसके करोड़ों मुख हैं, परन्तु दिल एक है,
इसकी अनेक भाषाएँ हैं, परन्तु मन एक है ।

केरल के शंकराचार्य, तमिलनाडु के रामानुजाचार्य तथा कर्नाटक के माध्वाचार्य ने उस युग में अपने सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार उत्तर भारत में किया ।

केरल के दो सौ वर्ष पूर्व राजा स्वाति तिरुनाल विद्या प्रेमी थे । उन्होंने हिन्दी के ज्ञान तथा संगीत की लहरियों से गुनगुनाहट प्रारंभ की । उनके दरबार में रंगय्यगार नामक तमिल भाषा-भाषी गायक थे जो हिन्दी के भी विद्वान थे और गीत गाया करते थे । स्वाति पर इनका बड़ा प्रभाव पड़ा । स्वाति तिरुनाल के समय में काव्य-भाषा के रूप में हिन्दी की प्रमुख उपभाषा ब्रजभाषा ही मान्य थी । ऐसी स्थिति में स्वाति तिरुनाल ने ब्रजभाषा को ही अपने गीतों का माध्यम बनाया । ब्रजभाषा के साथ खड़ी बोली तथा दक्खिनी भाषारूपों का पुट भी उनके गीतों में मिलता है । खड़ी बोली और ब्रजभाषा के समन्वित रूप को उन्होंने स्थान दिया । इस सम्बन्ध में विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करते

---

१. 'तोलकाप्पियम्' में शब्द-विचार में कहा गया था कि "मूल शब्द, परिवर्तित शब्द, आंचलिक शब्द, उत्तरी भारत के शब्द तमिल के लिए आवश्यक हैं ।"

हुए डॉ० गोपीनाथन ने शोध ग्रन्थ 'केरलियों की हिन्दी को देन' में विचार प्रस्तुत किये—

> "हिन्दी काव्य-भाषा के इतिहास में महाराजा का भाषापरक दृष्टि-कोण बड़ा ऐतिहासिक महत्त्व रखता है। वस्तुतः ब्रजभाषा के समय खड़ी बोली के रूपों को भी काव्य में प्रश्रय देते हुए उन्होंने हिन्दी का अखिल भारतीय समन्वित स्वरूप सामने रखा।"

ये गीत भक्तिरस पूर्ण हैं और श्रीकृष्ण, रामचन्द्र पर लिखे गये हैं—

> रामचन्द्र प्रभु तुम बिन प्यारे कौन खबर ले मेरी।
> बाज रही जिनके नगरी माँ सदा धरम की भेरी।
> जाके चरण कमल की रज से तिरिया तलक फेरी।
> और न कछु और भरोसा, हमें भरोसा तेरा।
> पद्मनाभ प्रभु फणि पर शायी कृपा करो क्यों देरी।

इसी प्रकार तमिल के प्रसिद्ध विद्वान् कुमारगुरुपर स्वामिगल ने काशी में गंगा जी के घाट पर कम्ब रामायण का प्रवचन (हिन्दी में) दिया होगा जिसको सुनकर तुलसीदास को रामचरितमानस लिखने की प्रेरणा मिली होगी। आंध्र[1] में मराठा राजा शाहू जी ने (१६०४-१७१८) 'पंचभाषा विलास नाटकम्' की हिन्दी में रचना की।

यह भूमिका मात्र इस उद्देश्य की दृष्टि से प्रस्तुत की गई है कि आर्य एवं द्रविड़ परिवार में जो इतना अधिक पार्थक्य दिखाया गया है वह वस्तुतः अंग्रेजों की बुद्धि की देन है। श्री अरविन्द ने 'आन द वेद' ग्रन्थ में स्पष्टतः कहा था—

> तमिष् संख्यावाची ही आर्य भाषा के भी प्राचीन संख्यावाची रहे हैं जिनका संस्कृत ने परित्याग कर दिया पर जिन्हें आज भी वेद में ढूँढा जा सकता है अथवा जो विभिन्न आर्य भाषाओं में बिखरे या दबे पड़े हैं; और तमिष् सर्वनाम भी इसी प्रकार आदिम आर्य-

---

१. मछलीपट्टम के पुरुषोत्तम कवि ने बत्तीस नाटक (१८८४-८६) हिन्दुस्तानी में लिखे जिससे मध्यदेश की भाषा की सार्वदेशिकता सिद्ध होती है।
डॉ० भीमसेन निर्मल

> भाषा के भी निर्देशक रहे हैं जिसके चिह्न इस प्राचीन भाषा में आज तक बने रहे गए हैं जिन्हें शुद्ध तमिष् माना जाता है, पर जो सामूहिक रूप में, भले ही इकाइयों के रूप नहीं, आर्य परिवार के शब्द-समूहों से अभिन्न हैं।"

इसी ग्रन्थ में अन्यत्र कहा गया है कि—

> "तमिष् भाषा के शब्दों की परीक्षा करने पर वे संस्कृतीकृत शब्दों से रूप और प्रवृत्ति से इतने भिन्न प्रतीत होते हैं फिर भी संस्कृत तथा इसकी दूरस्थ भगिनी लातिन के बीच, और कभी-कभी ग्रीक और संस्कृत के बीच, नए सम्बन्ध स्थापित करने में मुझे निरन्तर ऐसे शब्दों या शब्द-समूहों से मार्गदर्शन मिलता रहा जिन्हें विशुद्ध तमिष् माना जाता है और इस द्रविड भाषा[1] के माध्यम से ही मैं सर्वप्रथम उस तत्त्व का साक्षात्कार कर सका हूँ जो मुझे आर्य-भाषाओं का ध्रुव नियम प्रतीत होता है, जिसमें ही आर्यभाषाओं के उद्भव के स्रोत छिपे हैं मानो हम इन्हें रूपाकार ग्रहण करते देख रहे हों।"

महर्षि के ये वाक्य इस ओर संकेत करते हैं कि आर्यभाषाएँ और द्रविड़ भाषाएँ दो भिन्न भाषा-परिवारों की भाषाएँ नहीं हैं, अपितु उनका विकास एक ही भाषिक स्तर पर हुआ है और मात्र भारतीय भौगोलिक परिवेश में इनका विकास हुआ है। इस विषय पर विस्तार से इसी एकेडेमी में सन् १९७३ ई० में सुप्रसिद्ध आलोचक डॉ० रामविलास शर्मा ने भाषण माला प्रस्तुत की जो अब **'आर्य और द्रविड' भाषा-परिवारों का सम्बन्ध** 'शीर्षक से (सन् १९७९) प्रकाशित है। उन्होंने स्पष्टतः पृथक् परिवारों की विचारधारा का खंडन करते हुए, सोवियत विद्वान् आन्द्रोनोव के विचार प्रस्तुत किये—

> "इनकी सामान्य विशेषताएँ इतनी ज्यादा हो गई हैं अथवा परस्पर आदान-प्रदान इतना बढ़ रहा है कि आर्य-द्रविड़ परिवारों की जगह एक ही भारतीय भाषा-परिवार की कल्पना करना उचित होगा—

---

1. "And it through this Dravidian language that I came first to perceive what seems to me now the true law, origins and, ... the embryology of the Aryan tongues" (Page 45)

अभी नहीं तो कुछ दिन बाद यह भारतीय भाषा परिवार ऐतिहासिक भाषा-विज्ञान की अकाट्य सचाई बन जायगा।" (पृ० ३)

उनकी स्थापना है कि आर्यों से द्रविड़ों ने मुख्यतः शब्द उधार लिये हैं और आर्यों ने द्रविड़ भाषाओं से संरचनात्मक तत्त्व। इस दिशा में ब्रिटिश विद्वान् बरो और अमरीकी विद्वान् एमेनो के कार्य उल्लेखनीय हैं जो संस्कृत के विद्वान् होते हुए भी द्रविड़भाषाओं के विशेषज्ञ हैं। काल्डवेल जैसे विद्वान् ने द्रविड़ परिवार की वकालत करते हुए भी यह अनुभव किया कि दोनों परिवार वस्तुतः एक स्रोत के आज भी हो सकते हैं—

> I now proceed to point out the existence of another class of Sanskrit affinities in the Vocabularies of Dravidian languages. The words contained in the following list are true. Underived Dravidian roots, yet they seem to be so closely allied to certain Sanskrit words, that they may reasonably be concluded to be the common property of both families of tongues.

साथ ही स्पष्ट शब्दों में कहा नहीं वरन् घोषणा की—

> "there is a prepondence of evidence in fevour of the mutually independent origin of both the Sanskrit word and the Dravidian one, form a source which appears to have been common to both.
>
> ×　　　　×　　　　×
>
> Consequently if a connection can be traced as I think it can, between these words and the corresponding Sanskrit ones, it must be the connection of a common origin.[1]

इस दृष्टि से शब्द भण्डार के स्तर पर आर्य और द्रविड़ भाषाओं का पारस्परिक साम्य इतना स्पष्ट तथा गहन है कि गहनता के साथ तुलनात्मक कोश में ही किया जा सकता है।

---

१. काल्डवेल, कम्पेरेटिव ग्रामर ऑफ ड्रविडियन लैंग्वेजेज, लन्दन, १९१३ पृष्ठ ५७९-८० तथा पृष्ठ ५६६-५८६।

डॉ० रामविलास शर्मा की पुस्तक के अनुसार कुछ निष्कर्ष इस प्रकार हैं--

—भारत में आर्य-द्रविड़ भाषा-परिवारों का विकास परस्पर एक-दूसरे के सम्पर्क से ही हुआ है।[1]

—इन परिवारों ने पूरी तरह विकसित हो जाने के बाद एक-दूसरे पर प्रभाव डालना आरम्भ ही नहीं किया वरन् परिवार रूप में उनका विकास ही एक-दूसरे के सम्पर्क से हुआ है।[2]

—दोनों (भाषाओं) परिवारों के समानार्थक शब्दों में केवल ध्वनि-ही साम्य नहीं, वरन् उनके अर्थ-विकास की प्रक्रिया भी मिलती-जुलती है और यह प्रक्रिया उनके परस्पर सम्पर्क की धारणा को पुष्ट करती है।[3]

अन्ततः घोषणा की कि 'आर्य-द्रविड़ परिवारों का विकास उनके सम्पर्क का परिणाम है, अलगाव का नहीं।'[4]

इस ग्रन्थ के परिशिष्ट में औगी, ढेकुली, कोया, गुठली, सेरावनि, पैरा, पुमाल, करबी, घुघरी, कोल्हू, सेल्हा, जोंठरी, पतोई, पतावरि, भेर्नी, मोटरी, परई उत्तू, उदगरत, ओरवव, कौर, गुफ्फा, हुड़कना, लुकना, बचुका, गर्री, फरेंदा, पलुहत, कलार, बांबी, पांसि, चिड़िया, चीलर, चुन्न, मुन्नू, मन्ना, अजिया, अम्मा, ताई, माई, मामा शब्दों की विस्तृत व्युत्पत्तियाँ हैं।

इन शब्दों की कोई सीमा नहीं है। और जब इन समान शब्दों की खोज हिन्दी की उपभाषाओं से होती है तो और भी अधिक समानता स्पष्टतः दृष्टिगोचर होती है। आधुनिक बोलियों को लेकर कोई शोधकार्य नहीं हुए। मात्र भोजपुरी के सन्दर्भ की श्रीभगवान सिंह ने अपने ग्रन्थ 'आर्य-द्रविड़ भाषाओं की मूलभूत एकता' में चर्चा की (पृ० १६३-१६८)।[5] इस तुलना में लगभग सवा सौ शब्दों को लिया गया है।

---

१. पृष्ठ सं० ५३
२. वही, पृष्ठ सं० ६६
३. वही, पृष्ठ सं० ६६
४. वही, पृष्ठ सं० ७३
५. भगवान सिंह, आर्य-द्रविड़ भाषाओं की मूलभूत एकता, १९७३, दिल्ली।

समान शब्दावली के आधार पर उनका निष्कर्ष इस प्रकार है—

> "बहुत अधिक शब्द एक ही अतिशय बुनियादी[1] संकल्पना से, समानान्तर, पर सर्वथा समान नहीं, विकसित होते हुए देखने में आते हैं तो यह मानने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं रह जाता कि दोनों भाषाओं का उत्स कभी एक रहा हो सकता है और इस प्रकार के बुनियादी शब्दों की ओर उनसे व्युत्पन्न शब्द भण्डार की संख्या बृद्धि के साथ यह सम्भावना एक निश्चय में बदलने लगती है।" पृ० १७२

संस्कृत में कुल मिलाकर लगभग दो हजार धातुएँ हैं। बेनफी के मत से यह संख्या १७०० है जिनमें से काफी ऐसी हैं जिनका संस्कृत में कहीं प्रयोग भी नहीं हुआ। एक विद्वान् (एजरेन) ने यह संख्या ११२ निर्धारित की है। इस प्रकार यह संख्या तो मात्र पाणिनि तथा यास्क पर आधारित है। वैयाकरणों की दीर्घ परम्परा के बाद पाणिनि का आविर्भाव हुआ था। पर्याप्त सामग्री लुप्त हो चुकी। आवश्यक नहीं कि पुराने धातु पाठ उत्तर भारत में ही उपलब्ध हों। कुछ समय पूर्व 'काशकृत्स्न का धातुपाठ' कन्नड़ टीका के साथ उपलब्ध हुआ। चन्नवीर, नामक विद्वान् ने इसे जीवित रखा। पतंजलि (२०० ई० पू०) ने आपिशलम्, काशकृत्स्नम् का उल्लेख किया है। इस धातुपाठ का अनुवाद अब आचार्य युधिष्ठिर मीमांसक के प्रयत्न से हिन्दी में उपलब्ध है। इस धातुपाठ में ४५० धातुएँ अधिक हैं। अनेक शब्दों की व्युत्पत्तियाँ अब इससे उजागर हुईं—अक्का, अण्णा, अप्प, अम्मा, चन्न, जेमनम्, तायी, बुड्ढा (बुड्ड) जिसका 'बुड्ढा' तो अपभ्रंश रूप है। मात्र इस धातुपाठ के आधार पर जो शोधार्थी विद्वान् अध्ययन प्रस्तुत करेगा वह उत्तर-दक्षिण भाषागत द्वेष, संकीर्णन, प्रादेशिक वैमनस्यता का अन्त कर देगा। मात्र एक शब्द 'जेमनम्' कन्नड, गुजराती, पंजाबी को जोड़े हुए है, 'तायी' एक ओर कन्नड में है तो दूसरी ओर हिन्दी-पंजाबी में भी। 'हिन्दी के अखिल भारतीय रूप' पर डॉ० ब्रजेश्वर वर्मा ने विस्तार से लिखा है।

विविधता में एकता के दर्शन हमारी संस्कृति की देन है। भाषा-संस्कृति का अनूठा सम्बन्ध है। भाषा के बिना यदि संस्कृति पंगु है तो संस्कृति को

---

१. बुनियादी से तात्पर्य बेसिक से नहीं, वरन् रेडिकल्स से है जिसे मूल-भूत संकल्पना कह सकते हैं।

छोड़कर भाषा शून्यता को प्राप्त करती है। साहित्यिक कथ्य उत्तर-दक्षिण में समान हैं जिसमें रामायण, महाभारत, पुराण, भागवत, बौद्ध, जैन तथा अन्य धर्मों का साहित्य लिया जा सकता है। दूरदर्शन से प्रसारित रामायण और अब महाभारत ने यह सिद्ध कर दिया है। उत्तराधिकार में प्राप्त सांस्कृतिक मान्यताएँ देश की एकता के सूत्र में बाँधे हुए हैं। यह स्पष्ट हो गया है कि आर्य परिवार और द्रविड़ परिवार के भाषिक सम्बन्धों पर गहराई से पुनः विचार की आवश्यकता है। इस दिशा में मराठवाड़ा विश्वविद्यालय के डॉ० राजमल बोरा के अध्ययन की प्रतीक्षा है।

□□

२

भारतीय भाषाएँ

०-०. भारतीय भाषाओं का व्यवस्थित स्वरूप ग्रियर्सन के 'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया' से स्पष्ट हुआ। इसमें सन्देह नहीं कि इससे कुछ भ्रांतियाँ भी उत्पन्न हो गयीं, जो आज तक चली आ रही हैं। लेकिन इससे भी पूर्व जॉन बीम्स की पुस्तक 'आउट लाइन्स ऑफ इंडियन फिलोलॉजी' (सन् १८६६) के प्रथम अध्याय में भारतीय भाषाओं का विधिवत् विभाजन प्रस्तुत हुआ, जिसके अनुसार आर्य-वर्ग में ११ भाषाएँ, ईरानी वर्ग में ५ भाषाएँ, तूरानी परिवार के तीन वर्गों में ५६ भाषाएँ, कोल वर्ग में ९ भाषाएँ तथा द्रविड़ वर्ग में १२ भाषाएँ परिगणित की गयीं थीं। उस समय भारत का मानचित्र पर्याप्त भिन्न था।

०-१. भारतीय जनगणना १९६१ के अनुसार, जो १६५२ मातृभाषाएँ ४ भाषा-परिवारों में परिगणित की गयी हैं, इनमें से केवल ५७२ ही ग्रियर्सन के परिगणन से मेल खाती हैं। ४०० के लगभग बोलियों का कोई विवरण नहीं दिया गया, अतएव उन्हें पुनः वर्गीकृत कर दिया है फिर भी ५२७ बोलियों का कोई भी व्यवस्थित वर्गीकरण प्रस्तुत नहीं किया जा सका। इससे भारत की विशालता, बहुभाषिता, राजनीतिक रंग आदि सभी कुछ परिलक्षित होता है। इनमें से अनेक बोलियाँ ऐसी भी हैं, जिनके बोलने वाले बहुत ही सीमित संख्या में १० से भी कम हैं। आश्चर्य होता है जब ऐसी बोलियों की संख्या सैकड़ों से अधिक मिलती है। १९७१ की जनगणना के अनुसार, ५००० से अधिक बोलने वालों की बोलियों की संख्या मात्र २८१ है, जिनमें से प्रधान भाषाएँ निम्न-लिखित हैं—

आर्य परिवार

असमिया[1]	८९,५८,९७७
उड़िया[2]	१,९७,२६,७४५

कश्मीरी[3]	२४,२१,७६०
गुजराती[4]	२,५६,५६,२७४
पंजाबी[5]	१,३६,००,२०२
बांग्ला[6]	४,४५,२१,५३३
भीली	१२,५०,३१२
मराठी[7]	४,१७,२३,८६३
संस्कृत[8]	....
सिंधी[9]	१२,०४,६७८
हिन्दी[10]	१५,३७,२६,०६२
उर्दू[11]	२,८६,००,४२८

आस्ट्रो-एशियाटिक परिवार (मुण्डा)

संथाली	३६,६३,५५८
मुंडारी	७,७०,६१६
हो	७,४६,७६३

द्रविड़ परिवार

कन्नड[12]	२,१५,७५,०१६
कुरुख	१२,४०,३६५
गोंड़ी	१५,४८,०७०
तमिल[13]	३,७५,६२,७६४
तुलु	११,१६,६५०
तेलुगु[14]	४,४७,०७,६६७
मलयालम[15]	२,१६,१७,४३०

नोट : १ से १५ अंकित भाषाएँ भारतीय संविधान की अष्टम अनुसूची में उल्लिखित हैं।

१. आस्ट्रो-एशियाटिक (आग्नेय) परिवार

आस्ट्रिक (आग्नेय) परिवार को दो शाखाओं में विभाजित किया गया है—

१.१. कोल या मुण्डा शाखा

इस शाखा की भाषाएँ भारत के मध्य तथा पूर्वी क्षेत्र में [बिहार (छोटा नागपुर), उड़ीसा तथा मध्य प्रदेश] बोली जाती हैं। इस शाखा की भाषाओं

में प्रधान भाषा संथाली (३,६९३,५५८) है, जो बिहार तथा उड़ीसा की सीमाओं के आस-पास बोली जाती है। चाय-बागान के मजदूरों द्वारा आसाम तथा बंगाल में भी इस भाषा को ले जाया गया। संथाली का पर्याप्त साहित्य रोमन लिपि में प्रकाशित किया गया पर कलकत्ता विश्वविद्यालय द्वारा इसको इण्टरमीडिएट तक मान्यता दी गयी थी, जिसके लिए नागरी, रोमन तथा बांग्ला तीन लिपियाँ मान्य हैं।

इस शाखा की अन्य प्रधान भाषाओं में मुंडारी (७७०,९१६), हो (७४९, ७९३), शबर (२२१,७१२), उड़ीसा तथा आन्ध्र प्रदेश में गदाबा (२०४१४), कोरकु (२८४,०२२), खड़िया (८८, ३८९), भूमिज (४६,२४४) आदि परिगणित की जाती हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि भूमिज जातिविशेष है, जिसकी शाखा मुंडारी के अन्तर्गत आती है, अतएव प्रत्येक जनगणना में इसकी संख्या बदलती रही (१९५१-११३;३००; १९६१-१३१-२५८)। गदाबा में पहले ओलारी गदाबा भाषा-भाषी भी सम्मिलित कर लिये गये थे। दक्षिणी मुंडा की खड़िया जनसंख्या १८०,००० (१९५१), १७१,२६९ (१९६१) से भी अब पर्याप्त घट गयी है। अब के कोल (८२,९०४) और मुंडा (२१७, ५६५) भाषाओं को वर्गीकृत नहीं किया जा सका। इस शाखा में समस्त भाषाओं (बोलियाँ) की संख्या ५८ है।

१.२. मोनख्मेर शाखा

१.२.१. **उत्तर-पूर्वी शाखा**—इस शाखा की भाषाएँ उ० पू० क्षेत्र में स्थित खासी तथा जयंतिया पहाड़ियों पर बोली जाती हैं। इसकी प्रधान भाषा खासी (जन० ३८४,००६) है। अन्य गौण भाषाओं की संख्या ६ है। पहले बांग्ला-असमिया लिपि का व्यवहार होता था, पर अब रोमन का ही अधिक प्रचलन है।

१.२.२. **निकोबारी शाखा**—यह भाषा निकोबार द्वीप-समूह में बोली जाने के कारण निकोबारी (जन० १७,९७१) कहलाती है। इस परिवार की भाषाओं के बोलने वालों का प्रतिशत केवल १.५ है, पर भारतीय सन्दर्भ में इनका विशिष्ट स्थान है।

निष्कर्ष—यद्यपि इस परिवार की किसी भी भाषा को संविधान की अष्टम अनुसूची में मान्यता प्राप्त नहीं है, पर बिहार तथा मध्य प्रदेश की राज्य-सरकारें मुंडा भाषाओं का साहित्य प्रकाशित करने को सक्रिय हैं। इधर मेघालय राज्य की स्थापना के बाद 'खासी' भाषा का विकास अवश्यम्भावी हो गया है।

२. तिब्बती-चीनी अथवा किरात परिवार

इस परिवार को दो उपपरिवारों में बाँटा जा सकता है—

२.१. श्याम चीनी (जनसंख्या २६६)

इस उपपरिवार की 'ताई' शाखा के अन्तर्गत 'खमती-खम्ती' भाषा है, जिसके बोलने वाले केवल २६६ हैं।

२.२. तिब्बती बर्मी (जनसंख्या ३,१८३,५०५)

इस उपपरिवार की कई शाखाएँ हैं—

२.२.१. तिब्बत हिमालय शाखा—इस शाखा की भोटिया उपशाखा के अन्तर्गत प्रधान ११ भाषाएँ हैं, जिनमें लद्दाखी (जनसंख्या ५६,७३७) प्रधान है। हिमालय उपशाखा के अन्तर्गत प्रधान १६ भाषाएँ हैं। उत्तर-पूर्वी सीमान्त उपशाखाओं के अन्तर्गत प्रधान ५ भाषाएँ हैं।

२.२.२. असम-बर्मी शाखा—इस शाखा की बोली उपशाखा के अन्तर्गत प्रधान ६ भाषाएँ, जिसमें बौद्धों (५०६,००६), गारो (४११,५३२), नागा उपशाखा के अन्तर्गत प्रधान २६ भाषाएं (इनमें से अंगामी, सेमा, लाओ, लोथा आदि का विशेष स्थान है), कचिन उपशाखा में दो भाषाएँ, कूकी-चिन उपशाखा में प्रधान २६ भाषाएँ तथा बर्मी ग्रुप में २ भाषाएँ हैं।

इस प्रकार इस परिवार की मुख्य भाषाओं की संख्या ६८ है, लेकिन संविधान की अष्टम अनुसूची में. इनमें से किसी को भी मान्यता नहीं दी गयी है। यदि सम्पूर्ण बोलियों की संख्या लिया जाए, तो यह संख्या १६६१ की जनगणना के अनुसार २२६ के लगभग है। ये भाषाएँ-बोलियाँ लद्दाख से लेकर असम के पूर्व तक ऊँची-ऊँची चोटियों, बीहड़ जंगलों तथा घाटियों में फैली हुई हैं।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि राजनैतिक दृष्टि से मणिपुर-त्रिपुरा राज्य बन जाने से, मणिपुर-मैते (जन० ७८०,८७१) तथा त्रिपुरी (जन० २६८,६४८) का महत्त्व बढ़ा गया है। मणिपुरी की अपनी लिपि है। यह मणिपुर राज्य की राजभाषा है। वैष्णव मत के प्रचार के कारण इस पर आर्य भाषाओं का काफी प्रभाव है। मिजोरम की स्थापना से 'लुशई' (जन० २७०३१२) तथा

मेघालय की स्थापना के बाद 'खासी' तथा 'गारो' (जन० ४११५३२) का महत्त्व भी बढ़ता जा रहा है।

१९६२ के चीनी आक्रमण के बाद, नेफा तथा लद्दाख की भाषाओं का महत्त्व सामयिक दृष्टि से बढ़ गया है, और इधर पूर्वी सीमान्त पर जो उथल-पुथल होती रहती है, उसने भी जनसामान्य का ध्यान इस क्षेत्र की संस्कृति एवं भाषा की ओर आकर्षित किया है। रोमन लिपि के स्थान पर नागरी लिपि का प्रचार भी बढ़ता जा रहा है। अब इन भाषाओं के अध्ययन की ओर ध्यान गया है। वैसे संख्या तथा क्षेत्र की दृष्टि से इन भाषाओं का महत्त्व नगण्य है, पर राजनैतिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से इस ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है और अब सिक्किम राज्य की स्थापना के बाद, वहाँ की भाषाएँ— सिक्किम-भोटिया [जन० ३६७६० (६१)] तथा लेप्चा २३७०६ (६१) की ओर भी विशेष ध्यान देना होगा। वैसे नेपाली का वहाँ प्रमुख स्थान है।

३. द्रविड़ भाषा परिवार

भारत में महत्त्व, क्षेत्र तथा संख्या की दृष्टि से, भारत के दक्षिणी भूभाग में फैली हुई द्रविड़ भाषा का परिवार विशिष्ट स्थान रखता है। इस परिवार की अनेक भाषाओं में काफ़ी प्राचीन एवं महत्त्वपूर्ण साहित्य उपलब्ध है, जिससे इनकी दीर्घ परम्परा सिद्ध होती है। सन् १९६१ की जनगणना के अनुसार, १६१ मातृभाषाएं इस परिवार में परिगणित की गयी हैं, जिनमें से कुछ प्रधान भाषाओं को इस प्रकार वर्गीकृत किया गया है—

३.१. दक्षिण द्रविड़ शाखा

सभी प्रधान भाषाएँ इस शाखा के अन्तर्गत आती हैं, जिनमें से चार संविधान द्वारा स्वीकृत हैं—तमिल (जन० ३७,५९२,७९४), मलयालम (जन० २१,९१७,४३०), कन्नड़ (२१,५७५,०१९) तथा तेलुगु (४४,७०७,६९७)— जो क्रमशः तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक तथा आन्ध्र प्रदेश की राज्य-भाषाएँ भी हैं। इन सभी भाषाओं पर पाठक विशेष सामग्री अन्यत्र पाएँगे। २२ बोलियाँ तमिल में, ३६ तेलुगु में, ३२ कन्नड़ में तथा १४ मलयालम में मानी जाती हैं।

इसके अतिरिक्त भी इन शाखाओं में जिन कुछ भाषाओं को सम्मिलित किया जा सकता है, वे हैं—कुर्गी कोडगु (जन० ७२,०८५), तुलु (१,१५६, ९६०), बडगा (जन० १,०४,९१९), टोडा तथा कोटा आदि। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि तुलु का इसमें महत्त्वपूर्ण स्थान है।

३.२. मध्य द्रविड़ शाखा

इस शाखा की विशिष्ट भाषाएँ हैं : गोंडी (जन० १,५४८,०७०), कुई (जन० ३५०,३६६), पारजी (४३,९०६), कोया (२११,८७७), खोन्द या कौन्ध (जन० १६५,४०६), कोंडा (१५,६५१) तथा कोलामी।

३.३. उत्तरी द्रविड़ शाखा

इस शाखा की २ प्रधान भाषाएँ हैं—

कुरुख (ओरांव) (जन० १,२४०,३६५) तथा माल्तो [जन० (६१) ५८,६४५]

३.४. अन्य

इसके अन्तर्गत अन्य वे सभी छोटी-छोटी भाषाएँ रखी जा सकती हैं जो उक्त शाखाओं में नहीं आतीं।

इस परिवार की ही एक महत्त्वपूर्ण भाषा ब्राहुई बिलोचिस्तान में बोली जाती है, जो क्षेत्र विभाजन के पश्चात् अब भारत में नहीं है।

इस परिवार की तेलुगु, कन्नड़ तथा मलयालम भाषाओं पर संस्कृत का अत्यधिक प्रभाव है, जिसके फलस्वरूप काफी बड़ी संख्या में संस्कृत से आगत शब्दावली इनकी अपनी शब्दावली में घुलमिल गयी है। दूसरी ओर द्रविड़ परिवार के अनेक शब्द संस्कृत में खपाए गये हैं। जनसंख्या की दृष्टि से द्रविड़ भाषाएँ भारत की कुल जनसंख्या के पाँचवें भाग में बोली जाती हैं। ब्लाख के अनुसार, कॉडवेल द्वारा चर्चित 'द्रविडियन' नाम अन्य कुछ नहीं, इसी नाम का प्राचीन रूप है, जो संस्कृत में 'द्राविड़' अथवा द्रविड़ नाम से ज्ञात था।

४. भारतीय आर्य भाषा परिवार

भौगोलिक दृष्टि से इस परिवार का (१) पूर्व, (२) पश्चिमी, (३) उत्तर, (४) दक्षिणी तथा (५) मध्य, पाँच भागों में विभाजित किया जा सकता है।

४.१. पूर्वांचल

इस क्षेत्र में तीन प्रमुख भाषाएँ आती हैं : (१) असमिया, (२) बांग्ला तथा (३) उड़िया।

४.१.१. **असमिया या असमी**—भारत की उत्तर-पूर्वी सीमा पर स्थित असम प्रदेश की राज्य भाषा असमिया (जन० ८६,५८,६७७) है, जो भारतीय संविधान द्वारा स्वीकृत भाषाओं में से एक है। इस प्रदेश का प्राचीन नाम 'कामरूप' था। आसाम, असम, अहम, आहोम आदि इसी प्रदेश के नाम रहे हैं, जिसके आधार पर अब इस राज्य का नाम 'असम' पड़ा। इस भाषा का प्राचीन साहित्य काफी उन्नत है, जिसका प्रारम्भ १०-११वीं शताब्दी से मिलता है। यह भाषा आष्ट्रिक तथा तिब्बती-चीनी परिवार से घिरी है, फलतः दोनों परिवारों का प्रभाव इस पर पड़ा है। बाँग्ला लिपि (कुछ परिवर्तन के साथ) का ही प्रयोग किया जाता है। शंकरदेव ने इस भाषा को अपनी रचनाओं से काफी समृद्ध किया है।

४.१.२. **बाँग्ला**—पूर्वांचल की प्रमुख भाषा बाँग्ला या 'बंगाली' (जन० ४४,५२१,५३३) है, जिसकी काफी दीर्घ साहित्यिक एवं सांस्कृतिक परम्परा है। समीपवर्ती भाषाओं पर ही नहीं, सुदूरवर्ती भाषाओं पर भी बंगाली का प्रभाव पड़ा है। संविधान द्वारा स्वीकृत यह भाषा, पश्चिमी बंगाल की राजभाषा है। सन् १९६१ की जनगणना के अनुसार इसकी १५ बोलियाँ हैं, जिनमें से किशनगंजिया (बिहार), राजबंगसी (जालपाईगुड़ी) प्रधान हैं। बिहार की जनगणना के आधार पर किशनगंजिया को मैथिली की उपबोली कहा गया है। वैसे इसकी ५ प्रधान उपभाषाएँ हैं, जिनमें से पं० बंगाल में केवल दो-- पश्चिमी बंगाली तथा दक्षिण-पश्चिमी बंगाली है। बगाली भाषा का साहित्य काफी सम्पन्न है। प्रसिद्ध लेखकों में ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, बंकिम, शरतचन्द्र, रवीन्द्रनाथ टैगोर, काजी नजरुल इस्लाम आदि हैं।

४.१.३. **उड़िया**—पूर्वांचल की तीसरी भाषा उड़िया (जन० १९,७२६, ७४५) है जो उड़ीसा राज में बोली जाती है। इस भाषा की दक्षिणी सीमा द्रविड़-परिवार की प्रमुख भाषा तेलुगु से लगी होने के कारण इसकी लिपि का व्यापक प्रभाव है। १९६१ की जनगणना के आधार पर इसमें २४ बोलियाँ परिगणित की गयी हैं, जिनमें से मुइया, भुयन, कटकी, गंजामी तथा संभलपुरी उल्लेखनीय हैं।

४.२. पश्चिमी क्षेत्र

इस क्षेत्र की प्रधान भाषा 'गुजराती' (जन० २५,६५६,२७४) है, जो

गुजराती राज्य में बोली जाती है। गुजराती की २७ बोलियों में से कोल्ची, पारसी, सौराष्ट्री (तमिलनाडु) और कठियावाड़ी प्रमुख हैं। गुजराती एक ओर राजस्थानी, तो दूसरी ओर मध्यप्रदेश की मालवी बोली से भी काफ़ी साम्य रखती है।

४.३ उत्तरी क्षेत्र

उत्तरी क्षेत्र की पहाड़ी भाषाओं को मध्यक्षेत्र की हिन्दी भाषा के साथ वर्णित किया जाएगा।

इस क्षेत्र की प्रधान भाषा पंजाबी (जन० १३,६००,२०२) है, जिसकी २६ बोलियों में से बिलासपुरी, पट्टियानी, माँझी, राठी, जालंधरी, फ़िरोज़पुरी आदि प्रधान हैं।

इस क्षेत्र की अन्य उपभाषाओं में डोगरी (जन० १,२६८,८५५) और काँगड़ी (५५,३८६) उल्लेखनीय हैं जिनका महत्त्व बढ़ता जा रहा है।

टिप्पणी : १. भारत-ईरानी परिवार की 'आर्य' शाखा के समान जो दूसरी शाखा 'दरद' है, उसकी प्रधान भाषा कश्मीरी (जन० २,४२१,७६०) है (संविधान द्वारा मान्य) जिसकी अन्य बोलियों में गिलगिती, किश्टवारी, भुसावली तथा सिराजी प्रमुख हैं।

२. यद्यपि मूल लहँदा तथा सिंधी का क्षेत्र पाकिस्तान में चला गया है, फिर भी विस्थापितों की बोलियों के रूप में लहँदा की मुल्तानी और पुच्छी तथा हिन्दी की कच्छी, भारत के उत्तर तथा पश्चिम में बोली जाती है। सिंधी (जन० १,२०४,६७८) को तो संविधान में १५ वीं भाषा के रूप में मान्यता भी मिल गयी है।

४.४ दक्षिणी क्षेत्र

इस क्षेत्र की प्रधान भाषा मराठी (जन० ४१,७२३, ८६३) है, जो महाराष्ट्र राज्य की 'भाषा' के रूप में मान्य होने के साथ-साथ संविधान की अष्टम अनुसूची में परिगणित है। १९६१ की जनगणना के अनुसार इसकी ६५ बोलियाँ हैं।

इस क्षेत्र की दूसरी प्रधान भाषा कोंकणी (जन० १,५२२,६८४) है, जो

प्रमुख रूप से गोआ में बोली जाती है। हाल में ही साहित्य अकादमी द्वारा इसको मान्यता प्राप्त हो गयी है। इसकी भी अनेक बोलियाँ हैं।

नोट : दक्षिणी क्षेत्र में प्राप्त अन्य मान्य भाषाओं में भतरी (जन० १०३,७६६), हलबी (जन० ३४६,२५६) तथा नगपुरिया (जन० ३३५,१२६) उल्लेखनीय हैं।

४.५ मध्य क्षेत्र

मध्य क्षेत्र की प्रमुख भाषा हिन्दी (जन० १५,३७,२६,०६२) है जो काफी व्यापक क्षेत्र में फैली हुई है। हिन्दी को भारत गणराज्य की 'राजभाषा' संविधान में स्वीकार किया गया है। हिन्दी की अनेक उपभाषाएँ तथा बोलियाँ हैं, जिनको सम्मिलित कर लेने पर इसके भाषा-भाषियों की संख्या २० करोड़ से अधिक हो जाती है। अरबी-फ़ारसी शब्दावली से युक्त उर्दू (जन० २८,६००,४२८) भी हिन्दी की एक प्रमुख शैली है, जिसका व्यापक क्षेत्र में प्रयोग होता है। उर्दू कश्मीर की प्रधान राजभाषा तथा आन्ध्र प्रदेश की द्वितीय राजभाषा के रूप में भी स्वीकृत है।

४.५.१ पश्चिमी हिन्दी—हिन्दी का पश्चिमी रूप ही आज साहित्यिक भाषा (खड़ी बोली) के रूप में मान्य है, जो राजकाज, समाचारपत्र, शिक्षा के रूप में व्यवहृत की जाती है।

पश्चिमी हिन्दी की प्रधान उपभाषाओं में ब्रजी, कौरवी (खड़ी), कन्नौजी, बुंदेली तथा बाँगड़ू प्रधान हैं। उत्तर प्रदेश के मथुरा, अलीगढ़, आगरा, एटा, बुलन्दशहर, मैनपुरी, बदायूँ, हरियाणा के गुड़गाँव तथा राजस्थान के भरतपुर, धौलपुर तथा जयपुर पूर्व में 'ब्रजभाषा', उत्तर प्रदेश के रामपुर, मुरादाबाद, बिजनौर, मेरठ, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, देहरादून (मैदानी भाग) तथा हरियाणा के अंबाला में 'खड़ी बोली', हरियाणा के करनाल, रोहतक, हिसार, पटियाला (कुछ भाग), नाभा, जींद में 'बाँगड़ू' (हरियाणवी); उत्तर प्रदेश के पीलीभीत, शाहजहाँपुर, फर्रूखाबाद, हरदोई, इटावा और कानपुर में 'कनौजी' तथा उत्तर-प्रदेश के झाँसी, हमीरपुर, जालौन तथा मध्य प्रदेश के ग्वालियर, मुरैना, शिवपुरी, गुना, सागर, पन्ना, दमोह, सिवनी, छिंदवाड़ा, नरसिंहपुर, रायसेन, विदिशा, होशंगाबाद, बैतूल आदि जिलों में 'बुंदेली' बोली जाती है। साहित्यिक दृष्टि से ब्रजभाषा की परम्परा यद्यपि काफी प्राचीन है, लेकिन आधुनिक साहित्य अधिकतर खड़ी बोली में लिखा जा रहा है।

४.५.२. पहाड़ी—पहाड़ी वर्ग उत्तर में हिमालय के साथ-साथ पश्चिम से पूर्व तक फैला हुआ है, जिसमें जनगणना के अनुसार ८९ से भी अधिक बोलियाँ हैं। पूर्वी पहाड़ी ही नेपाल की राजभाषा नेपाली है, जिसके बोलने वाले भारत में (जन० १,२८६,८२४) भी हैं। मध्य पहाड़ी में गढ़वाली (जन० १,२७७,१५१) तथा कुमाऊँनी (जन० १,२३४,९३९) तथा पश्चिमी पहाड़ी की अनेक उपभाषाओं में चम्बयाली (५२,९७३), किन्नौरी (४५.४६४), लाहौली (१६,७४९), सिरमौरी (१४,५४२) आदि मुख्य हैं।

४.५.३. पूर्वी हिन्दी—इसके अन्तर्गत तीन प्रधान उपभाषाएँ हैं—अवधी (१३६,२५९), बघेली (२३१,२३१), छत्तीसगढ़ी (६,६९३,४४५) हिन्दी के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'रामचरित मानस' (तुलसीदास) तथा पद्मावत (जायसी) अवधी में ही लिखे हुए हैं। बघेली और छत्तीसगढ़ी में यद्यपि कोई उल्लेखनीय साहित्य नहीं मिलता, मगर इनके बोलने वालों की संख्या काफी है और इनमें पर्याप्त लोक-साहित्य है।

४.५.४. बिहारी हिन्दी—बिहार में हिन्दी की कई उपभाषाएँ हैं। पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा बिहार के विशाल क्षेत्र में बोली जाने वाली 'भोजपुरी' (जन० १४,३४०,५६४), प्रचुर साहित्य से युक्त 'मैथिली' (जन० ६,१२१, ९२२) तथा मगही (६,६३८,४९५)। वैसे बिहार में अन्य उपभाषाओं में अंगिका (४२३,५०२), वज्जिका (६९,०७०), मुजफ्फरपुरिया (१६,३०५), हजारीबगिया (५,५७०), भागलपुरी (९४,४०१) आदि प्रमुख हैं। 'मैथिली' को साहित्य अकादमी से मान्यता प्राप्त है।

४.५.५. राजस्थानी मार्ग—राजस्थानी वर्ग में लगभग ७१ मातृभाषाएँ परिगणित की गयी हैं, जिनमें से मेवाती (९४,६८७), ढूँढाड़ी (१५५,०४०), मारवाड़ी (४,७१४,०९४), बागड़ी (१,०५५,६०७), हाड़ौती (३३४,३७७) प्रमुख हैं। साहित्य अकादमी ने राजस्थानी (जन० २,०९३,५५७) को भी मान्यता दे दी है।

नोट : १ राजस्थानी की 'बंजारी' (जन० १,२०३,३३८) बोली के बोलने वाले भी व्यापक रूप से फैले हुए हैं।

२. भीली (जन० १,२५०,३१२) का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है जो राजस्थान, गुजरात तथा मध्य प्रदेश के सीमावर्ती क्षेत्रों में फैली हुई है। इसकी भी ३६ उपबोलियाँ वर्णित की गयी हैं।

३. निमाड़ी (जन० ७६४,२४६) निमाड़ तथा धार की बोली है।

भारतीय भाषाओं का यह संक्षिप्त सर्वेक्षण है।
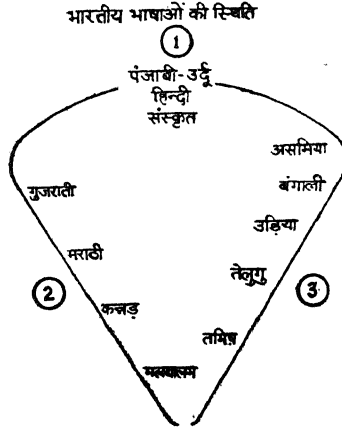
१—५.४१ लाख वर्ग मील

२—२.७७ लाख वर्ग मील—पश्चिमी तटीय भाषाएँ

३—२.५ लाख वर्ग मील—पूर्वी तटीय भाषाएँ

हिन्दी भाषी क्षेत्र—कुल भूभाग का ४६%

जनसंख्या ४५%

समान तत्त्व-ध्वन्यात्मक स्तर पर

भारत बहुभाषा-भाषी देश[1] है। भारतीय संविधान के अनुसार छब्बीस

---

१. भारतीय जनगणना १६६१ के अनुसार जो १६५२ मातृभाषाएँ चार भाषा परिवारों में परिगणित की गई हैं जिनमें से मात्र ५७२ ही ग्रियर्सन के परिगणन से मेल खाती हैं। ४०० के लगभग बोलियों का कोई भी व्यवस्थित वर्गीकरण प्रस्तुत नहीं किया जा सका। इस संख्या से भारत की विशालता, बहुभाषिता, राजनीतिक रंग सभी परिलक्षित है। इनमें से अनेक बोलियाँ ऐसी भी हैं जिनके बोलने वाले बहुत ही सीमित संख्या में मात्र १० से भी कम हैं। आश्चर्य होता है जब ऐसी बोलियों की संख्या सैकड़ों में मिलती है।

जनवरी १९६५ से हिन्दी को संघीय प्रशासन की मुख्य राजभाषा की मान्यता मिली है जबकि सहभाषा के रूप में अंग्रेजी चल रही है। संविधान की अष्टम अनुसूची में भारत राष्ट्र की पन्द्रह भाषाएँ स्वीकृत हैं। भाषाई दृष्टि से विश्व के राष्ट्रों को तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं—

१. वे राष्ट्र जहाँ राष्ट्रभाषा और राजभाषा एक ही है, साथ ही केन्द्रीय शासन है, जैसे, इंग्लैंड, फ्रांस आदि।

२. वे राष्ट्र जहाँ राष्ट्रभाषाएँ कई हैं और सभी भाषाएँ राजभाषा के रूप में मान्य हैं। शासन प्रणाली संघीय अथवा एकतंत्रीय हो सकती है। ऐसे देश हैं—कनाडा, स्विटजरलैंड।

३. तीसरे वर्ग में वे राष्ट्र लिये जा सकते हैं जहाँ संघीय शासन प्रणाली हो और अनेक राष्ट्रभाषाएँ-राज्यभाषाएँ उस राष्ट्र में प्रचलित हों पर उनमें से मात्र एक को राजभाषा के रूप में मान्यता दी जाए, जैसे, रूस, अमेरिका आदि।

भारत इस दृष्टि से तीसरे वर्ग में आता है और इसमें भी रूस (यू० एस० एस० आर०) से अधिक समानता इस दृष्टि से कि दोनों देशों में राज्यों की भाषाएँ भिन्न-भिन्न हो सकती हैं पर केन्द्रीय राजभाषा एक है।

[ग्रियर्सन को अपने सर्वेक्षण में २३१ भाषाएँ तथा ७७४ बोलियाँ मिली थीं। "भाग्यवश जाँच के बाद यह भी पता चला कि विभिन्न प्रदेशों में इनमें से कतिपय नाम दो बार, तीन बार आ गये थे और संभवतः ऐसा भी हुआ कि एक ही भाषा के नमूने विभिन्न नामों से आये।" अन्ततः ये संख्या १७९ भाषाएँ तथा ५४४ बोलियाँ रहीं। सन् १९२१ की जनगणना के अनुसार सम्पूर्ण भारतीय साम्राज्य में १८८ भाषाएँ थीं।]

सन् १९७१ की जनगणना के अनुसार पाँच हजार से अधिक बोलने वालों की बोलियों की संख्या मात्र २८१ है।

सन् १९८१ की जनगणना पर आधारित संख्या प्रयत्न करने पर भी उपलब्ध नहीं हो सकी।

देश में अनेक भाषाओं[1] का प्रयोग देश की एकता में क्या बाधक है ? यह विचारणीय प्रश्न है। पहली बात तो यह है कि उस विशाल भूभाग में उत्तर से दक्षिण या पश्चिम से पूर्व की यात्रा करें तो एकदम यह नहीं कह सकते कि यहाँ अमुक भाषा-क्षेत्र समाप्त हो गया और यहाँ से अमुक भाषा प्रारंभ हो गई[2] और अब नयी भाषा समझ में नहीं आ रही। भाषाओं की आपसी बोधगम्यता ही इस बात का प्रमाण है कि दो भिन्न भाषाएँ परस्पर बहुत अधिक समीप हैं अथवा भाषाओं का एक-दूसरे पर इतना अधिक प्रभाव है कि उनके बीच में विभाजन रेखा खींचना प्राय: कठिन ही नहीं, असंभव है। भाषाओं की अनेकता बाधक होती है यह विचार ऊपरी दृष्टि से ही आतंकित करता है। वास्तव में भारतीय संदर्भ में भाषाओं की अनेकता के मूल में एकता के लक्षण विद्यमान हैं। विस्तृत भूमिका में उस ओर ही संकेत किया गया है।

भारतवर्ष में राष्ट्रीय एकता का श्रेय अंग्रेजों को दिया जाता है। अगर यह

---

१. यहाँ यह उल्लेखनीय है कि ग्रियर्सन द्वारा उल्लिखित १७९ भाषाओं में से ११६ तो स्यामी-चीनी तथा तिब्बती-बर्मी कुल की भाषाएँ हैं, जो नेफा तथा बर्मा के सीमा-प्रदेश में बोली जाती हैं। द्रविड़ कुल से संबंधित १६ भाषाएँ हैं जिनमें से संविधान में चार ही स्वीकृत हैं। आर्य भाषाएँ ३८ हैं जिनमें से राजस्थानी, भीली, प० पहाड़ी, मध्य पहाड़ी, पूर्वी हिन्दी, भोजपुरी, मगही, मैथिली आदि विशाल हिन्दी प्रदेश में ही सम्मिलित होती हैं। इस प्रकार संविधान में केवल चौदह भाषाएँ ही स्वीकृत की गई हैं—असमिया, बंगला, उड़िया, तेलुगु, तमिल, मलयालम, कन्नड़, मराठी, गुजराती, पंजाबी, कश्मीरी, उर्दू, संस्कृत और हिन्दी। बाद में पन्द्रहवीं, 'सिन्धी' जोड़ दी गई है।

भाषाओं तथा बोलियों की इतनी बड़ी संख्या केवल चौंकाने वाली है। इनमें कुछ ऐसी भाषाएँ तथा बोलियाँ हैं जिनकी बोलने वालों की संख्या दस से भी कम है।

२. यूरोप में विभिन्न राज्यों की यात्रा करते समय व्यक्तियों को ऐसा अनुभव होता है। छोटी-सी इंगलिश चैनल पारकर फ्रांस में नितान्त भिन्न भाषा का अनुभव होता है।

वेल्स की भाषा भी अंग्रेजी से पर्याप्त भिन्न है।

वास्तविकता है तो स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि अंग्रेजों से पूर्व क्या भाषाई एकता नहीं थी। व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को समझ नहीं पाते थे। धार्मिक तथा सांस्कृतिक स्थलों पर देश के विभिन्न भागों से व्यक्ति पर्याप्त संख्या में आवागमन के कष्टकर साधन होते हुए भी जाते थे और आज भी इन स्थलों पर जाकर इस भ्रांति का निराकरण अपने आप ही हो जाता है कि भाषाई कठिनाई होती है। उत्तर में बदरीनाथ से लेकर सुदूर दक्षिण रामेश्वरम् तथा पूर्व में जगन्नाथपुरी से पश्चिम में द्वारिका तक जाने की प्रथा प्राचीन काल से चली आ रही है। इसके मूल में देशाटन के माध्यम से देश-दर्शन का भाव ही प्रधान है। इन स्थानों पर 'बहुभाषिकता' प्राप्त होती है और यात्रियों को भाषा की विभिन्नता के कारण कष्ट नहीं उठाना पड़ता। भारतवासियों के इष्टदेव राम और कृष्ण की जन्मस्थली अयोध्या और मथुरा दोनों ही हिन्दी प्रदेश में स्थित हैं। देश के कोने-कोने से प्रतिवर्ष लाखों व्यक्ति इन नगरों में आते हैं पर भाषा की विभिन्नता एकता में बाधक सिद्ध नहीं होती वरन् इसके विपरीत भाषाई आदान-प्रदान से अलौकिक सुख प्राप्त होता है। जो भाषाएँ यहाँ बोली जाती हैं, उनमें पर्याप्त भिन्नता होते हुए भी समता के तत्त्व हैं। संस्कृत और परम्परागत मध्यदेशीय भाषाएँ पालि, प्राकृत, अपभ्रंश की कड़ी में ही आज हिन्दी विद्यमान हैं।

भारतीय भाषाओं के मूल में समान तत्त्व और एकता के अनेक कारण हैं—

१. प्राचीन काल में संस्कृत का भारतीय भाषाओं पर प्रभाव। आर्य भाषाएँ तो संस्कृत के विभिन्न रूपों से विकसित हुई हैं पर द्रविड़ भाषाएँ भी संस्कृत से कम प्रभावित नहीं हुई। संस्कृत की अन्तर्धारा ही समस्त भाषाओं में व्याप्त होने के कारण बाह्य रूप से पृथक्-पृथक् भाषाओं में एकता के तत्त्व समाहित हैं।

२. प्राचीन काल से ही आर्य, मुंडा[१] तथा द्रविड संस्कृतियों तथा उनके सम्बद्ध भाषाओं का एक-दूसरे पर पर्याप्त प्रभाव पड़ा जिससे ध्वन्यात्मक तथा शब्दावली के स्तर पर काफी आदान-प्रदान बढ़ा।

---

१. विश्वभाषाओं का मूल हैं, आदिवासी भाषाएँ—डॉ० तिलक सिंह, हिन्दुस्तानी, अप्रैल—जून १९८८, पृ० ६३-६८।

३. मध्यकाल में मुस्लिम संस्कृति तथा राजभाषा अरबी-फारसी का भारत की भाषाओं पर समान प्रभाव पड़ा।

४. आधुनिक काल में यूरोप की भाषाओं, विशेषत: अंग्रेजी भाषा और साहित्य का आधुनिक भारतीय भाषाओं पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा।

५. धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक कारणों के अतिरिक्त प्रेस का विकास, साक्षारता का प्रसार, शिक्षा के प्रति अभिरुचि के फलस्वरूप भारतीय भाषाओं में समान शब्दावली, मुहावरों तथा कहावतों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई है।

राज्यों के तेजी से विकास के साथ, राज्यों की राजभाषाओं का विकास भी तेजी से हो रहा है। फलस्वरूप नवीन तत्त्व इतने समाहित होते जा रहे हैं कि पुरानी भिन्नताएँ क्षीण होती जा रही हैं। मुख्यत: संस्कृत के व्यापक प्रभाव के कारण और गौणत: अंग्रेजी तथा अरबी-फ़ारसी से आदान के कारण भारतीय भाषाओं में समान तत्त्व पर्याप्त मात्रा में बढ़ते जा रहे हैं।

मध्य देशीय भाषा हिन्दी, उर्दू शैली को समाहित कर, इस समय समस्त भारतवर्ष का ४६ प्रतिशत क्षेत्र है जिसके समझने-बोलने वाले भारत की जनसंख्या के पैंतालीस प्रतिशत हैं। भाषाओं का आपसी लेन-देन निरन्तर बना रहा। पारस्परिक विवाह-सम्बन्ध; असंख्य तीर्थस्थल, देवालय, निरन्तर भ्रमणशील साधु-संन्यासी और उनके प्रवचन, धार्मिक पीठों के आचार्य—शंकर, निम्बार्क, माध्व, चैतन्य, वल्लभ आदि और उनके अखिल भारतीय प्रवास, स्वतन्त्रता आन्दोलन के समय सामाजिक व राजनैतिक नेताओं के भाषणों के फलस्वरूप हमारे देश में कोई भी विचारधारा किसी सीमा में आबद्ध न रहकर आसेतु हिमाचल व्याप्त रही। इन्हीं सब कारणों से समानता के तत्त्व आज विद्यमान हैं। प्रारम्भ में इसकी पूर्वपीठिका पर विस्तार किया गया है।

ध्वन्यात्मक स्तर पर समानता

भाषाशास्त्रियों ने इस बात का पता पर्याप्त अध्ययन कर लगा लिया है कि प्रारम्भ में आर्य भाषाओं में मूर्द्धन्य ध्वनियाँ—ट्, ठ्, ड्, ढ्, ण्, ऋ, ष्, आदि नहीं थीं। द्रविड़[1] तथा मुंडा भाषाओं के प्रभाव के कारण ये ध्वनियाँ संस्कृत में भी आ गईं।

---

१ डॉ० कृष्णमूर्ति ने तेलुगु के जिन १२३६ क्रियापदों को सूचीबद्ध किया है उनमें टकार से प्रारम्भ होने वाला क्रियापद नहीं है और उसके सघोष रूप 'ड्' से प्राम्भ होने वालों की संख्या २४ है।

इसी प्रकार आदि द्रविड भाषा में महाप्राण वर्ण—ख्, घ्, छ्, झ्, थ्, ध्, ठ्, ढ्, फ्, भ्, नहीं थे पर द्रविड परिवार की तीन भाषाओं—तेलुगु, कन्नड तथा मलयालम में तथा उर्दू में ये महाप्राण ध्वनियाँ समाहित हो गई हैं। 'तमिल' में इन ध्वनियों का अभाव है। यही कारण है कि 'तमिल' अपने प्राचीनतम रूप में आज विद्यमान है और अन्य द्रविड भाषाभाषियों की अपेक्षा इन्हें हिन्दी सीखने में अधिक कठिनाई होती है।

स्वर

भारत की समस्त आधुनिक भाषाओं में स्वरों की संख्या कुछ थोड़े-बहुत हेर-फेर के साथ समान है। मोटे तौर पर भारतीय भाषाओं की स्वरतालिका इस प्रकार है—

ह्रस्व	अ	इ	उ	ऐ	ओ
दीर्घ	आ	ई	ऊ	ए	औ
संध्यक्षर				ऐ (अइ)	
				औ (अउ)	

'ऋ'[1] की समस्या :

'ऋ', 'ॠ', 'ऌ', 'ॡ' आदि वर्ण संस्कृत के कारण भारतीय भाषाओं में हैं। 'ॡ' का तो संस्कृत में भी कोई प्रयोग नहीं मिलता मात्र 'ॠ' की समता पर इसको बढ़ा लिया गया होगा। 'ॠ' ता 'ऌ' से युक्त शब्द भी सीमित

---

१. ऋक् प्रातिशाख्य में इसका उच्चारण वर्त्स्य स्थल कहा गया है साथ ही मूर्धन्य स्वर भी माना गया है। इसके उच्चारण के सम्बन्ध में शिक्षा ग्रंथों तथा प्रातिशाख्यों में पर्याप्त मतभेद मिलता है। ऐसा प्रतीत होता है यह कोई ऐसी ध्वनि थी जिसका आक्षरिक (सिलेबिक) महत्त्व था अतएव इसी कारण इसको स्वरों में सम्मिलित कर लिया गया। साथ ही अन्य तीन की वृद्धि कर ली गई। 'ऋ' का विकास 'र'; 'रि', तथा 'रु' तीनों ही रूपों में हुआ, साथ ही दीर्घ रूप में भी—

अ	आ	इ	ई	उ	ऊ
गृह-घर	कृष्ण-कान्ह	गृद्ध-गिद्ध	शृङ्ग-सींग	स्मृति-सुरत	वृद्ध-बूढ़ा

संख्या में हैं और वह भी व्याकरण ग्रंथों तक ही सीमित है, इन दोनों वर्णों की पृथक् से व्यवस्था भारत की अनेक भाषाओं—गुजराती, बंगला, उड़िया, तेलुगु, मलयालम, कन्नड भाषाओं में है। पंजाबी, (गुरुमुखी), तमिल, उर्दू सिन्धी, कश्मीरी आदि भाषाओं में तो 'ऋ' वर्ण का भी कोई स्थान नहीं है। संस्कृत से प्राप्त तत्सम शब्दों 'ऋ' वर्तनी में विद्यमान है, जैसे, 'ऋषि'। जहाँ तक उच्चारण का सम्बन्ध है, 'ऋ' का उच्चारण बहुत समय पहले 'पालि' भाषा में ही समाप्त हो गया था। आज मानक हिन्दी में इसका उच्चारण 'रि' की तरह होता है अतएव इसको स्वरों में रखना उचित नहीं। तद्भव शब्दों में यह 'र', 'रा', 'रि', 'री', 'रु' तथा 'रु' रूपों में विकसित हुआ है। भारतीय भाषाओं में इसका उच्चारण 'रि' तथा 'रु' दोनों ही रूपों में मिलता है। तेलुगु और कन्नड में यह संघर्षी 'र' की भाँति और गुजराती, उड़िया में 'रु' की तरह उच्चरित होता है। मराठी में अधिक मूर्द्धन्यता के साथ उच्चरित होता है।

ह्रस्व 'ऎ' तथा 'ऒ'

ये दोनों ह्रस्व ध्वनियाँ द्रविड भाषाओं—तमिल, तेलुगु, मलयालम, कन्नड की विशेष ध्वनियाँ हैं। मानक हिन्दी में इनका अभाव है पर हिन्दी प्रदेश की प्रधानता उपभाषाओं—ब्रजभाषा तथा अवधी में ये दोनों ध्वनियाँ विद्यमान हैं। अंग्रेजी, फ़ारसी में भी ये स्वर हैं जिनको हिन्दी भाषा-भाषी दीर्घ स्वर के रूप में ही बोलता है। अब समय आ गया है कि इन ह्रस्व ध्वनियों के लिए हिन्दी को वर्णमाला-नागरी में लिपिचिह्न स्थिर कर लिये जाएँ और आवश्यकतानुसार शुद्ध उच्चारण की ओर ध्यान दिया जाय। केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय ने देवनागरी के लिए मानक रूप में इनको स्थान दिया है।

अं, अः

ये दोनों ध्वनियाँ संस्कृत वर्णमाला के प्रभाव के कारण भारत की सभी भाषाओं की वर्णमाला तथा लिपि में अपना स्थान बनाये हुए हैं। दोनों व्यंजन के समान हैं।

विशेष ध्वनियाँ

१. 'ओइ, बंगला तथा असमिया में विशेष स्वर है। बंगला में प्रयुक्त 'अ' भी वृत्ताकार होंठों से बोला जाता है।

२. हिन्दी में 'ऐ' और 'औ' का शुद्ध मूल स्वर के रूप में विकसित उच्चारण भी क्रमशः [ɛː] तथा [ɔː] है जिनका हिन्दी की पूर्वी उपभाषाओं में अभाव है अतएव इन दोनों स्वरों का शुद्ध मानक उच्चारण सीखने के लिए पश्चिमी हिन्दी भाषा-भाषी क्षेत्र ही उपयुक्त स्थल हैं जिसमें आगरा, मेरठ, दिल्ली—मथुरा आदि नगर आते हैं।

व्यंजन ध्वनियाँ

तमिल को छोड़कर शेष भारतीय भाषाओं की व्यंजन ध्वनियों की तालिका इस प्रकार है—

स्पर्श—क् ख् ग् घ् (क़्)
ट ठ् ड् ढ् (ड़, ढ़—उत्क्षिप्त रूप में उच्चरित)
त् थ् द् ध्
प् फ् ब् भ्

स्पर्श-संघर्षी—च् छ् ज् झ्

अनुनासिक—म् न् ण् ञ् ङ्

संघर्षी—श् ष् स् ह् (ख़्), (ग़्) (ज़्), (फ़्) (ऱ्) (ऴ्)

लुंठित—र्

पार्श्विक—ल् (ळ्)

अर्द्धस्वर—य् व्

संयुक्त व्यजन—क्ष, त्र ~ त्र, ज्ञ, श्र (क्रमशः क्+ष्, त्+र्, ज्+ञ्, श+र्)

नोट—**तमिल**, **मलयालम** में वर्त्स्य 'ट' ध्वनि भी है। इसी प्रकार **कश्मीरी** में चवर्ग 'च,' 'छ', **सिन्धी** में अंतःस्फोटी व्यंजन **ग**, **ज**, **ड**, **ब**, भी हैं। बंगला-असमिया में 'य़' कुछ भिन्न है।

विशेष टिप्पणियाँ—

स्पर्श [क़्] अलिजिह्वीय स्पर्श ध्वनि है जिसका उर्दू तथा अरबी-फ़ारसी से प्रभावित भाषाओं में विशेष स्थान है।

पार्श्विक [ळ] यह वैदिक ध्वनि तथा प्राचीन द्रविड़ ध्वनि लगभग सभी भारतीय भाषाओं में है। शुद्ध लिप्यन्तरण के लिए भारत सरकार ने परिवर्धित नागरी लिपि में इसको स्थान दिया है। नागरी टाइपराइटर के की-बोर्ड में अब यह विद्यमान है।

नासिक्स [ऩ] तमिल तथा मलयालम में दन्त्य तथा वर्त्स्य दो नासिक्य ध्वनियाँ हैं जबकि हिन्दी में केवल एक है जिसको परम्परागत दन्त्य मानते हैं पर है वर्त्स्य। दन्त्य 'न' के लिए भारत सरकार ने 'ऩ' वर्ण स्वीकार किया है।

संघर्षी [ख़, ग़,] उर्दू के प्रभाव के कारण हिन्दी, पंजाबी, सिन्धी, कश्मीरी भाषाओं में हैं।

[ज़, फ़] अरबी-फ़ारसी तथा अंग्रेजी के प्रभाव के कारण भारत की लगभग सभी भारतीय भाषाओं में विद्यमान हैं।

[ऱ] दक्षिण भारतीय भाषाओं में 'र' के कठोर उच्चारण के लिए

[ऴ] तमिल तथा मलयालम की विशिष्ट ध्वनि है जिसके लिए पृथक् लिपि चिह्न है।

[च़, ज़] ये दन्त्य-वर्त्स्य ध्ननियाँ केवल मराठी में हैं।

उत्क्षिप्त [ड़, ढ़] ये दोनों ध्वनियाँ आधुनिक आर्यभाषाओं—हिन्दी, उर्दू, सिन्धी, पंजाबी, उड़िया आदि में विकसित हुई हैं। पृथक् से लिपि चिह्न भी बढ़ा लिये गये हैं।

भारत सरकार के केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा देवनागरी लिपि के मानकीकरण में अपनाये गये कुछ विशिष्ट लिपि चिह्न इस प्रकार हैं—

कोश में प्रयुक्त विशेषक चिह्न

स्वर :

(i)	ह्रस्व ए और ओ	ऍ ऑ
	मात्राएं	ॅ ॉ
(ii)	कश्मीरी के विशिष्ट स्वर	ॖ ॗ ॵ ॶ ॳ ॴ
	मात्राएं	ॖ ॗ ॕ ॏ ॓ ॑

व्यंजन :

(i)	कश्मीरी चवर्ग	च़ छ़
(ii)	सिंधी अंत:स्फुट व्यंजन	ॻ ॼ ॾ ॿ
(iii)	तमिळ और मलयाळम् (ழ, ഴ)	ऴ
(iv)	बंगला, असमिया	य़
(v)	दक्षिण भारतीय भाषाओं के 'र' का कठोर उच्चारण	ऱ
(vi)	तमिळ, मलयाळम् (ன, ഩ)	ऩ
(vii)	फारसी-अरबी/अंग्रेजी से गृहीत	क़ ख़ ग़ ज़ फ़
(viii)	उर्दू ऐन (ع)	अ़

स्थिति के अनुसार — अ़ा (अ़ादत), अ़ि (अ़िबादत,), अ़ी (अ़ीद), अ़ु (अ़ुमर), अ़ै (अ़ैब), अ़ौ (अ़ौरत), आदि

भाषागत विशेषताएँ

द्रविड परिवार—तेलुगु, कन्नड़, मलयालम, तमिल में मूर्द्धन्य पार्श्विक 'ळ' है। मलयालम, तमिल में मूर्द्धन्य संघर्षी 'ऴ' भी है। दन्त्य नासिक्य ध्वनि 'ऩ' भी है। मलयालम में वर्त्स्य स्पर्श 'ट्र' तथा वर्त्स्य संघर्षी ध्वनि भी हैं।

आर्य परिवार की विभिन्न भाषाओं की महाप्राण ध्वनियाँ भी संस्कृत के प्रभाव के कारण तेलुगु, कन्नड तथा मलयालम में प्रविष्ट हो चुकी हैं। मात्र तमिल ही ऐसी भाषा है जिसमें महाप्राण ध्वनियों का अभाव है। अघोष स्पर्श व्यंजनों के सघोष उच्चारणपूरक बंटन में होने के कारण उनके लिए पृथक् से वर्ण नहीं हैं, अघोष वर्णों--प्, त्, ट्, क् से ही काम चलाया जाता है। तमिल में संघर्षी श्, ष्, स्, ह्, उत्क्षिप्त ड़, ढ़ ध्वनियाँ नहीं हैं। मध्यस्थिति में प्राप्त एक और विशिष्ट व्यंजन [अख़] है जिसका उच्चारण भी 'क' वर्ण से ही चला लिया जाता है। शब्द की आदि स्थिति में [क्], मध्य में दो स्वरों के मध्य कंठ्य संघर्षी [अख़], नासिक्य के परे सघोष स्पर्श [ग्], मध्य-अन्त्य में संघोष स्पर्श [ग्] तथा द्वित्व रूप में आने पर पुनः अघोष स्पर्श [क्] उच्चारित होता है।

आर्य परिवार

उड़िया—मूर्द्धन्य पार्श्विक 'ळ' विशेष ध्वनि है। एक विशेष प्रकार का 'य्' भी है। संघर्षी ध्वनि 'स्' का उच्चारण ही अन्य 'श्', 'ष्' के स्थान पर होता है।

बंगला—'व्' का उच्चारण 'ब्' रूप में ही होता है। संघर्षी ध्वनियों में 'स्' के स्थान पर 'श्' का उच्चारण सर्वत्र होता है। बंगला 'य्' भी भिन्न है।

असमिया—'य्' का उच्चारण 'ज्' तथा 'स्', का 'ह्' रूप में होता है।

गुजराती—'ळ' विशेष ध्वनि है।

मराठी—दो विशिष्ट ध्वनियाँ 'च़्' तथा 'ज़्' हैं।

कश्मीरी—कश्मीरी च वर्ग के लिए 'च़्' तथा 'छ़्' हैं।

सिन्धी—अंतःस्फोटी व्यंजन 'ग॒', 'ज॒', 'ड॒' 'ब॒' विशेष हैं।

उर्दू—'क़्' स्पर्शी तथा 'ज़्', 'फ़्', 'ख़्', 'ग़्' संघर्षी ध्वनियाँ हैं। अँन का भी विशिष्ट उच्चारण है। उत्क्षिप्त तथा महाप्राण ध्वनियाँ विशेष स्थान रखती हैं।

हमारी भाषाओं में यह ध्वन्यात्मक समानता शताब्दियों के परस्पर आदान-प्रदान व सम्पर्क का परिणाम है। आवागमन के बढ़ते साधन, जनसंपर्क साधनों तथा प्रसारणों में रेडियो-टेलीविजन का बढ़ता प्रसार, सिनेमा का बढ़ता प्रचार तथा समाचारपत्रों के माध्यम से यह समानता बढ़ी है। भारतीय संस्कृति की उपमा कवीन्द्र रवीन्द्र ने इस प्रकार दी है—"आधुनिक भारत की संस्कृति एक ऐसे शतदल कमल के समान उपमित की जा सकती है जिसका एक-एक दल एक प्रान्तीय भाषा और उसकी साहित्य-संस्कृति है। किसी एक को मिटा देने से उस कमल की शोभा की हानि होगी।" क्षेत्रीय भाषाओं के रूप में रंग-बिरंगे फूलों को ये समान ध्वन्यात्मक तत्त्व एकसूत्रता में बाँधे हुए हैं जिनसे निस्सन्देह भविष्य में हिन्दी के विकास में सहायता मिलेगी।

———

3

अखिल भारतीय शब्दावली

स्वतंत्र भारत में भारतीय संविधान के अनुच्छेद ३५१ के अनुसार शब्दावली-निर्माण का कार्य शिक्षा मंत्रालय (अब मानव संसाधन विकास मंत्रालय) ने वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग (सन् १९६१) को सौंप दिया। इससे पूर्व सन् १९५० से वैज्ञानिक शब्दावली बोर्ड मंत्रालय के अन्तर्गत ही कार्यरत था। यद्यपि यह कार्य भारतीय चिन्तन की परम्परा के विपरीत था क्योंकि पंतजलि[1] कहते हैं कि "घड़े की आवश्यकता होती है तो आदमी कुम्हार के पास जाता है और कहता है—मुझे एक घड़े की जरूरत है। घड़ा बना दो। पर जब उसे अपनी बात कहते समय नये शब्द की आवश्यकता होगी तो वह दौड़ा हुआ वैयाकरण के पास नहीं जाता है कि अमुक अर्थ, भाव के लिए मुझे एक शब्द चाहिए। शब्द बना दो, अपितु स्वयं शब्द गढ़ लेता है।" फिर भी भाषा-नियोजन के आधुनिक सिद्धान्तों के अनुरूप यह स्वीकार किया गया। और फिर जब वैज्ञानिक प्रगति के साथ नित नूतन शब्दों की आवश्यकता हो तो यह प्रक्रिया आवश्यक समझी गई। इसके फलस्वरूप हमारे यहाँ अनेक विषयों में पारिभाषिक शब्दावली विकसित हुई। अनेक भारतीय भाषाओं के होते हुए भी अखिल भारतीय शब्दावली का महत्त्व स्वयंसिद्ध था जिससे विचार-विनिमय और संचार-प्रक्रिया सुगमतापूर्वक सम्पन्न हो सके। आयोग ने प्रारम्भ से ही ऐसी शब्दावली के निर्माण पर बल दिया जो थोड़े-बहुत

---

१. घटेन कार्यं करिष्यन् कुम्भकार कुलं गत्वाह कुरु घटं कार्यमनेन करिष्यामीति। न तद्वच्छब्दान् प्रयोक्ष्यमाणो वैयाकरणकुलं गत्वाह 'कुरु शब्दान् प्रयोक्ष्य' इति। तावत एवार्थम् उपादाय शब्दान् प्रयुञ्जते ॥

—पतंजलि; व्याकरण महाभाष्यम्, पृ० ३२१

हेर-फेर के साथ भारत की विभिन्न भाषाओं की प्रकृति के अनुरूप ढाली जा सके और उसका अखिल भारतीय स्तर पर प्रयोग किया जा सके। शब्दावली निर्माण के समय देश के सभी क्षेत्रों के विद्वानों को इससे जोड़ा गया। इस प्रकार की शब्दावली के लिए जो मार्ग दर्शक सिद्धान्त निर्धारित किये गये उनका सार इस प्रकार है—

(१) अन्तर्राष्ट्रीय शब्दों को ज्यों-का-त्यों रखा जाए अर्थात् उनका केवल लिप्यंतरण किया जाए। इस कोटि में तत्त्वों के तथा रासायनिक योगिकों के नाम, भार-माप व भौतिक मात्राओं की इकाइयाँ, गणितीय चिह्न, प्रतीक और सूत्र, द्विपद नाम, व्यक्तियों के नाम पर आधारित शब्द और रेडियो, पेट्रोल, राडार आदि ऐसे शब्द आते हैं जिनका प्रचलन विश्वव्यापी स्तर पर हो गया है।

(२) नए शब्दों का निर्माण संस्कृत धातु से किया जाए।

(३) क्षेत्रीय स्तर के हिन्दी शब्द, जो बहुप्रचलित हो गये हैं, उनको अपना लिया जाए। लेकिन ऐसे मामलों में अन्य भारतीय भाषाओं को यह छूट रहे कि वे उनके बदले अपने पर्यायों का इस्तेमाल कर सकें।

यह सच है कि उन सिद्धान्तों का कड़ाई से पालन नहीं हो सका फिर भी आधारभूत तकनीकी शब्दों के अखिल भारतीय रूपों के पहचानने की परियोजना भारत सरकार ने प्रारम्भ की और आज अनेक विषयों में अखिल भारतीय शब्दावली छँटकर प्रकाशित हो चुकी है। इस शब्दावली में अन्तर्राष्ट्रीय तथा संस्कृत से उद्भूत/निर्मित शब्द तो हैं ही साथ ही आगत शब्दावली— अंग्रेजी और अरबी-फारसी भी है। अरबी-फारसी से उद्भूत उन शब्दों को भी ले लिया गया है जो पहले से ही प्रचलित हैं और अधिकांश भारतीय भाषाओं द्वारा मान्य हैं।

उदाहरणस्वरूप कुछ विषयों में स्वीकृत की गई अखिल भारतीय शब्दावली की संख्या इस प्रकार है—

विषय	शब्दावली की संख्या
समाज विज्ञान एवं सांस्कृतिक नृविज्ञान	४५०
गणित	५००
खगोलिकी	५००
भूगोल	४२५
भौतिकी	४५०
अर्थशास्त्र और वाणिज्य	११००

उपर्युक्त आँकड़े बहुत उत्साहवर्द्धक नहीं हैं फिर भी आशा का संकेत मात्र तो है ही, साथ ही संभावना है कि प्रयोग के आधार पर यह संख्या निरंतर बढ़ती जाएगी। आवश्यकता मात्र अंग्रेजी की जकड़ से छुटकारा पाने की है। विभिन्न विषयों के कुल १५००० अखिल भारतीय शब्दों की पहचान की जा चुकी है।

इसी प्रकार का केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित **'भारतीय भाषा कोश'** (सन् १९८४) के माध्यम से हुआ जिसमें पाँच हजार प्रविष्टियाँ हैं। इस कोश के लिए हिन्दी मूलक आधार शब्दावली जो निदेशालय में तैयार की गई, उसको अंतिम रूप लेखक ने दिया और सभी भारतीय भाषाओं में पर्याय अंकन और पुनरीक्षण का कार्य सम्बन्धित भाषाविशेषज्ञों से करवाया गया।

इस कोश के आरम्भ में वर्गीकृत शब्दावली और बाद में सामान्य शब्दावली अकारादिक्रम में दी गई है। कोश की सब से बड़ी विशेषता है कि सभी भारतीय भाषाओं में प्रयुक्त शब्द देवनागरी लिपि में दिये गये हैं। अखिल भारतीय शब्दावली में समता कहाँ तक है, इस बात को कुछ उदाहरणों से देखा जा सकता है। 'जंगल' (वन) शब्द सभी भारतीय भाषाओं में है, मात्र दक्षिण की चार भाषाओं में 'काटुँ' के विभिन्न रूप हैं। 'दौलत' शब्द सभी भारतीय भाषाओं में विद्यमान है पर दक्षिण की चारों भाषाओं में संस्कृत शब्द 'संपत्ति' के विभिन्न रूप हैं। 'हार' (पराजय) भी सभी भाषाओं में है, मात्र तमिल में पंगु है, मलयालम्-तेलुगु में पराजयम् तथा पराजयमु है।

हिन्दी	पंजाबी	उर्दू	कश्मीरी	सिंधी	मराठी	गुजराती	बंगला	असमिया	उड़िया	तेलुगु	तमिल	मलयालम	कन्नड़
गहने	गहणें	जेवरात	गहनु	जेवर	दागिने	घरेणां	गहना	गहना अलंकार	गहणा	आभरण, मुलु-	नगैगलु, आवरणंगल	आभरणड ड कूं	आडवेग्ल
अंगूठी	छाप मुंदरी	अंगूठी	वोज	मुंडी	अंगठी	वीटी, मुदिर्का	आंटी	आङुठि आङठि,	मुदी	उंगारुमु	मोदिरम्	अंगुलीयम् मोतिरम्,	उन्गुर
कंगन	कंगण	कंगन	कोर	कंगणु	कांकण	कंगन कंकण, कंगड़ी	कंकण (न)	खारु	कंकण, कंगन	कंकणमु	वकैं	कंकणम् वल,	कंकण
कर्णफूल	बुंदे	कनफूल	कानुदुर,	दुरु कनफुलु	कर्णफूल	कर्णफूल,	कोंनर-फुल	काणुफूल कंरिया	कानफुल	कम्मलू,	कम्मलू, तोड़	कम्मल्	वेण्डोले ओले
चूड़ी	चूड़ी	चूड़ी	बुंगुरे कछकर	चूड़ी	बांगड़ी	जुडली चूड़ी	चुड़ि	चुरी, चुरीखारु	चूड़ी	गाजुलु	वलैयल्	बल	बलै,
टीका	टिक्का	टीका	टिकुं टयोक,	चिंदी, टिकिड़ो	बिंदी,	तिलक चांल्लों, चादिला, टीलु	टिक्लि	फोट, तिलक	टीका	तिलकमु	पोट्टु	पोट्टुं	बैतले-मणि
नथ	नथ	नथ	नस्तु-बाज	नथ	नथ	नथड़ी नथणी, नथनी	नथ	नाकपुल नाकबालि	नोथ	मुक्कुपुडक	वुल्लाक्कु	मूक्कुत्ति	नतु
पायल (पाजेब)	पंजेब	पाजेब (पायल)	पाजेबु	पाजेबु	तोरड़ी, नूपुर	पायल, झांझर, झांझरी	नूपुर	पायल, नुपुर	पाउजि	गज्जेलु	सलणै	कालचिम्पु	गज्जे,
बिछुआ, (बिछुवा)	बिछुआ	बिछवा	बिछवु	बिछूअड़ो	जोड़वें	वीछुवा, वीछियो बीछूवा	आङ्, गोट	भरिर आङुलिता पिधा अलंकार विशेष	बालि (बला)	लोलाकुलु	वलैयम्	लोलाक्कु कुणक्कु	ओले
मंगलसूत्र	मंगलसूतर	मंगलसूत्र	मंगलसूत्र	मंगलसूत्र	मंगलसूत्र	मंगलसूत्र	कालो पुतिरमाला	मंगलसूत्र	मंगलसूत्र	मंगलसूत्रम्	तालि	मागल्यसूत्रम् तालि	मंगलसूत्र

क्रम	हिन्दी	पंजाबी	उर्दू	कश्मीरी	सिंधी	मराठी
१.	मानदंड	मानदंड कसवट्टी	मेयार (पैमाना)	मयार	माणु	प्रमाण मानदंड
२.	मान्यता प्राप्त	मानता प्रापत	तसलीमशुदा (मंजूरशुदा)	मोनमुत तसलीम-कोरमूत	मान्यता हासुलु	स्वीकृतिप्राप्त मान्यताप्राप्त
३.	मिसिल	मिसल	मिसिल	मिसल	फाइलु	फाइल
४.	मुख्यालय	मुख्य दफ्तर	सद्र मकाम (सद्र दफ्तर)	सदुर दफतर	हेड आफीस	मुख्य ठाणे, हेड क्वार्टर
५.	मोहर	मोहर	मोहर	मोहर	मुहिर	शिक्का मोहर
६.	यथा प्रस्तावित	तजबीजे अनुसार	हस्बेतजबीज	युथतजबीज, हसबि तजबीज	प्रस्ताव मूजिब ठहिराव मूजिबि	जसे सुचाविलेले आहेतसे यथा प्रस्तावित
७.	यथासंभव	यथासंभव	हत्तलइमकान	युथमुमकिन आसि, हतुल इमकान	यथासंभवु, हर मुम्किनु	जथासंभव

क्रमशः

गुजराती	बंगला	असमिया	उड़िया	तेलुगु	तमिल	मलयालम	कन्नड़
मानदंड मापदंड	मापदण्ड	मानदंड	मानदंड	कोलबद्द	अलवुकोल	मानदंडम् अलवुकोल	मानदंड
मान्यता प्राप्त	मान्यता- प्राप्त	स्वीकृति- प्राप्त	मान्यता- प्राप्त	गुर्तिपु पोदिम	अंगीगरिव- कप्पट्ट	अंगकृतम्	गान्यते पडंद
फाईल	नथि फाइल	नथिगोट, फाइल	मिशल	फैलु	कोप्पु	फयल्	कडत, फैलु
बड़ी कचेरी	मुख्यालय (क्खा)	प्रधान कार्यालय	मुख्यालय	प्रधान कार्यालयमु	तलैमै इडम् अलुवलगम्	मुख्यालय	मुख्य कार्यालय
महोर सिक्को	मोहर	मोहर	मोहर	मुद्र	मुददिरै सील	मुद्र सील	मुद्रे मोहरु
ठराव्या प्रमाणे	यथा- प्रस्तावित (ज)	यथा- प्रस्तावित	जथा प्रस्तावित	सूचिचिन प्रकार	मुनमालिद पडि	निर्देशिच्च प्रकारम्	प्रस्ता- विसिदन्त
ग्रथासंभव शक्यता मुजब	यथासम्भव (ज)	यथासंभव	जथासंभव	साध्यमइ- नतवरकु	मुडिदवर	कलियुम् विघम	साध्यवा- दष्टु

हिन्दी	पंजाबी	उर्दू	कश्मीरी	सिंधी	मराठी	गुजराती	बंगला	असमिया	उड़िया	तेलुगू	तमिल	मलयालम	कन्नड़
कोयल	कोइल	कोयल	कुकिल	कोइलि कोयलि	कोकिला	कोयल	कोकिल कोयेल	कुलि	कोइलि	कोकिल	कुयिल्	कुयिल्	कोगिले
कौआ	काँ	कौवा	काव	कांउं	कावला	कागडो	काक, काग	काउरा	काउ (कुआ)	ककि	काक्कै कागम्	काक्क	कागं
गरुड़	गरड़	गरुड़	गरुड़	गरुड़ अकाबु	गरुड	गरुड	गरुड़	गड़ुरपखि	गरुड़ बड़बाज	गरुड़ पक्षि	गरुडन्	गरुडन् परूंतु	गुरड
गौरेया	गौरीआ	गैरेया	अेर	झिर्की	एकपक्षो चिमषो	एकपक्षि	चड़ाई चड़ुई	घन-चिरिका घर-चिरिया	पाणिकुआ ककांरगर जलचर परवो-विशेष	पिच्चुक	चिट्टुक-कुरूवि	कुरुवि	गुब्बच्चि
चिड़िया	चिड़ी	चिड़िया	चेर	झिर्की	चिमणो	चकलो	पारवो	चराई	पिखो	पिट्ट	पखं	पक्षि पखं	हक्कि पक्षि
तोता	तोता	तोता	तोतु	तोतो	पोपट	पोपट सूडो	तोता	भाटौ	शुआ (शुक)	चिलुक	किळि	शुकम तत्त	गिलो
पपीहा	बंबीहा पपीहा	पपीहा	फशिनूल	पपीहो	चातक	पपैयो चातक	पापिया	पामी-पिया	शारी विशेष	वान-कोयिल	इरा-पपाडि	चातकम् वेकांपल	चातक पक्षि

तत्सम शब्दावली

सभी भारतीय भाषाओं की विपुल संख्या में शब्दावली का स्रोत संस्कृत भाषा है। संस्कृत की तत्सम और तद्भव शब्दावली विशेषतः है। भारत सरकार के केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली के तत्त्वावधान में यह प्रयास किया गया कि तत्सम शब्दावली के रूपों को सभी भारतीय भाषाओं में खोजा जाए, फलतः **तत्सम शब्दकोश'** उन विद्यार्थियों तथा विद्वानों के लिए प्रकाशित किया गया (सन् १९८८) जो "भारतीय भाषाओं में प्रचलित समान शब्दावली की खोज करते हुए उसकी मूलभूल एकता की पहचान तथा उनमें परस्पर समान तत्त्वों की जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं।" भारतीय भाषा कोश में तद्भव शब्दों की बहुलता है जबकि प्रस्तुत कोश में मात्र तत्सम शब्दों तक सीमित रखा गया है।

प्रस्तुत कोश में सोलह सौ शब्द हैं। संस्कृत शब्द की प्रविष्टि के साथ सभी भारतीय भाषाओं में संस्कृत के तत्सम या तत्समवत् रूप दे दिये गये हैं, जैसे—

संस्कृत 'उत्थान' : हिन्दी, असमिया, उड़िया, कन्नड़, कश्मीरी, गुजराती, तमिल (उत्तानम्), तेलुगु (उत्पानमु), पंजाबी, बंगला, मलयालम (उत्पानम्), सिंधी आदि में प्रयुक्त होता है।

साथ ही यह भी देखा गया है कि अमुक संस्कृत का तत्सम शब्द कितने अर्थों में प्रयुक्त होता है, जैसे—

'दंड' चार अर्थों में : १. यष्टिका, डंडा, छड़ी
२. जुर्माना, ताडन, सजा,
३. राजचिह्न
४. चार हाथ के परिमाण का नाप

उक्त चार अर्थों में से प्रथम दो अर्थ तो प्रायः सभी भारतीय भाषाओं में विद्यमान हैं। 'राजचिह्न' अर्थ में कुछ सीमित भाषाओं में है जबकि चौथा मात्र एक दो भारतीय भाषा में। यहाँ यह उल्लेख-नीय है कि **'व्यायाम विशेष'** अर्थ हिन्दी में नया विकसित हुआ है और यह अर्थ हिन्दी के साथ **उड़िया**, **कश्मीरी**, **मराठी** आदि में भी प्रचलित हो गया है। यह विशेष अर्थच्छाया हिन्दी तक सीमित नहीं है, वरन् अन्य कई भाषाओं में बढ़ती जाती है।

कुछ अर्थ मात्र कुछ भाषाओं तक सीमित हैं अतएव ऐसे शब्दों के प्रयोग में सतर्कता रखनी चाहिए, जैसे, मलयालम में 'अंतरिक्ष' के लिए 'वातावरण', तमिल में 'अवसर' के लिए' 'जल्दी', 'शीघ्रता' तथा 'आवश्यकता'।

कुछ ध्वनियों के विशिष्ट उच्चारण कुछ भाषाओं में हैं, जैसे असमिया में अवसर (अवख़र), अंसुर (अख़ुर) आदि।

सभी भारतीय भाषाओं में तत्सम रूपों की प्रबलता है। यहाँ तक 'तमिल' में अंगम्, अंगीकारम्, अंगुलम्, अंगुलि, अंजलि, अंदम् (अंत), अंदरम् (अंतर), अंतियेष्टि (अंत्येष्टि), अंदिरम् (अंत्र), अंदन (अंध) अम्बरम् (अंबर), अम्शम् (अंश), अकालम्, अट्शम् (अक्ष।, अट्शयम् (अक्षय), अखंडम् आदि सहस्रों शब्द विद्यमान हैं। मात्र तमिल की प्रवृत्ति के अनुसार उन शब्दों का उच्चारण भिन्न हो जाता है और फिर उच्चारण के अनुरूप वर्तनी।

मात्र 'उर्दू' ऐसी भारतीय भाषा है (जिसको हिन्दी के विद्वान् हिन्दी की शैली मात्र स्वीकार करते हैं) जो संस्कृत की तत्सम शब्दावली से परहेज करती है। पर इसका तात्पर्य यह नहीं कि तत्सम शब्दों की संख्या शून्य है। 'उर्दू' में भी निम्नलिखित तत्सम् शब्द[1] प्रचलन में है क्योंकि उनकी वर्तनी सरल है और बोलने में व्यंजनगुच्छ का उच्चारण नहीं करना पड़ता है—

> अंक, अंग, अंत, अंतर, अंबर, अकाल, अगिन, अचल, अतिथि, अनन्त, अनर्थ, अनादि, अनुभव (अहसास), अन्न, अपार, अमर, अमृत, अर्थ, अवसर, आकाश, आकाशवाणी, आज्ञा, आदर्श, आधार, आनन्द, आपत्ति, आभास, आश्रम, आसन आदि।

ऐसी स्थिति में मात्र यह कहना कि उर्दू में संस्कृत की तत्सम शब्दावली प्रयोग में नहीं आ सकती ठीक नहीं। आवश्यकता इस बात की है जो वर्तनी तथा उच्चारण में पर्याप्त सरल हैं, साथ ही किसी विशेष अर्थच्छटा को लिये हुए हैं उनका लेखक प्रयोग करें।

अधिकांश शब्द शरीर के अवयव, वस्त्राभूषण, मनोरंजन, यात्रा, काल-

---

१. मैंने पता किया कि अब अंगुल, उँगली, अतीत, अफरना, अधिकार, अहिंसा, आरोप, आलस, आशा, उत्साह, उपाय, उदास, उदासी, उपहार, उपकार, जीवन, घटना, कमल, नाटक, पवित्र, भवन, भजन, लेखक, किवाड़, कलसा, तीसरा आदि शब्दों का प्रयोग खूब होता है।

गणना, खाद्य पदार्थ, पर्व, उत्सव, संस्कार, रीतिरिवाज, मनोविकार, पारिवारिक तथा सामाजिक सम्बन्ध साहित्य और कला शास्त्रीय संकल्पनाओं से सम्बन्धित हैं।

अगर इस शब्दावली में देवी-देवताओं के नाम तथा सांस्कृतिक शब्दों को और ले लिया जाए तो कम-से-कम पाँच सौ शब्द और बढ़ जाते हैं। इस प्रकार दो हजार तथा ढाई हजार के मध्य संस्कृत की तत्सम शब्दावली सभी भारतीय भाषाओं में विद्यमान है अथवा स्वीकृत है। भारतीय भाषाओं की विशिष्ट ध्वनियों को भी नागरी लिपि में लिखने का प्रयास किया जा सकता है।

भारतीय भाषाओं में समान शब्दावली

भारतीय संविधान में स्वीकृत भाषाओं में से सभी मुख्यतः आर्य भाषा परिवार तथा द्रविड़ परिवार से सम्बन्धित हैं। इन दोनों परिवारों के पारस्परिक सम्बन्ध पर पृथक् से विचार किया गया है। अन्य दोनों परिवार-आस्ट्रिक तथा तिब्बत-चीनी परिवार की किसी भाषा को मान्यता नहीं दी गई है। वैसे आस्ट्रिक परिवार का भी प्रभाव आर्य तथा द्रविड़ भाषाओं पर कम नहीं है। आस्ट्रिक परिवार के मुंडा वर्ग की कुछ भाषाएँ पर्याप्त समृद्ध हैं और उनकी शब्दावली भी आर्य परिवार की भाषाओं में घुल-मिल गई है। रायपुर स्थित रविशंकर विश्वविद्यालय के भाषा विज्ञान विभाग में मुंडा परिवार की अनेक भाषाओं पर शोधकार्य हो चुके हैं। अब आवश्यकता उसके समेकित अध्ययन की है। पेरिस के विद्वान् सिलवाँ लेवी (Sylvain Levi) ने अपने अध्ययन से सिद्ध किया है कि ऋग्वेद तथा अथर्ववेद में आस्ट्रिक परिवार की शब्दावली है। कुछ विशेष कौशलों—जैसे, ईंट बनाने की कला व धान व्यवसाय से सम्बन्धित पर्याप्त शब्द दोनों परिवारों में समान रूप से गये हैं। पान, कपास, रुई के वस्त्र, बाँस के उद्योग, तीर सम्बन्धी शब्दावली सर्वत्र फैल गई है। भौगोलिक नामों पर भी प्रभाव पड़ा है। कोड़ी (बीस) से गिनाई की प्रथा तो आर्य परिवार में पर्याप्त स्वीकृत है। इस प्रकार की सामग्री का संकलन प्रो० बागची ने ढूँढ़कर अनुवाद किया था जिसको कलकत्ता विश्वविद्यालय ने 'Pre-Aryan and Pre-Dravidian in India' शीर्षक से प्रकाशित किया है। लीडेन विश्वविद्यालय के विद्वान् कूपर (Kuiper) ने वैदिक साहित्य से मुंडा (आदि) परिवार की पर्याप्त शब्दावली ढूँढ़ ली है।

आर्य परिवार की भाषाओं में अद्भुत समानता है ही पर द्रविड़ परिवार की भाषाओं में और उसके साथ हिन्दी में भी काफ़ी बड़ी संख्या में समान शब्दावली विद्यमान है। स्वतन्त्रता के बाद भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय[१] का ध्यान भी इस ओर (केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय की स्थापना के पूर्व) गया जिसके फलस्वरूप हिन्दी तथा भारत की अन्य भाषाओं[२] में प्राप्त समान

---

१. The Ministry has felt that it will be well worthwhile to investigate what stock of words is shared in common by Hindi and the other languages of the country. The present series of pomphlets is the first fruit of this investigation. An attempt has been made here to collect such words as are commonly used and understood by Hindi speaking people of India and have also become an integral part of the vocabulary of other major Indian languages. × × × This investigation has revealed an unexpectedly large number of much words used in common over a large part of the country. This stock of words therefore, makes an excellent starting point for Hindi to develop into an all India language. — K. G. Saiyidain

Hindi Words Common to other Indian Languages, Hindi. Gujrati, 1958.

२. हिन्दी-असमिया, सन् १९५८
हिन्दी-बंगाली, सन् १९५७
हिन्दी-उड़िया, सन् १९५८
हिन्दी-कश्मीरी, सन् १९५७
हिन्दी-पंजाबी, सन् १९५७
हिन्दी-गुजराती, सन् १९५८
हिन्दी-मराठी, सन् १९५९
हिन्दी-तमिल, सन् १९५७
हिन्दी-मलयालम, सन् १९५७
हिन्दी-तेलुगु, सन् १९५८
हिन्दी-कन्नड़, सन् १९६२

शब्दावलियाँ प्रकाशित की गईं। इस सीरीज की महत्त्वपूर्ण पुस्तक 'गुजराती—हिन्दी की समान शब्दावली' प्रकाशित हुई।

कालान्तर में शिक्षा 'मंत्रालय के अंतर्गत भारतीय भाषा संस्थान, मैसूर[१] की स्थापना के बाद यही कार्य पुनः इस संस्थान में कुछ संशोधन के साथ कराया गया। साथ ही कुछ अन्य विश्वविद्यालयों में भी छुट-पुट रूप से करवाया गया, जैसे कोचीन, पूर्णे विश्वविद्यालयों में भी हिन्दी-मलयालम तथा हिन्दी मराठी आदि । केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा में इस दिशा में कुछ कार्य सम्पन्न हुए हैं जिनमें सर्वाधिक उल्लेखनीय है, डॉ० बी० जगन्नाथन कृत 'हिन्दी और तमिल की समान स्रोतीय भिन्नार्थी शब्दावली'।

उपर्युक्त कार्यों का आधार विभिन्न भाषाओं के कोश ही रहे। लिखित साहित्य तथा मौखिक परम्परा से इन समान शब्दों के स्रोत नहीं ढूंढ़े गये। ऐसे कार्यों में स्रोत महत्त्वपूर्ण होता है अतएव दो शोधकार्य अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ के हिन्दी विभाग में मेरे निर्देशन में सम्पूर्ण हुए। इन दोनों कार्यों के शोधार्थियों की मातृभाषा तत्सम्बन्धी भाषा थी और हिन्दी का उन्हें अच्छा ज्ञान था।

हिन्दी तथा मलयालम—डॉ० वेल्लयाणि अर्जुनन
हिन्दी तथा कन्नड—डॉ० सोमशेखर 'सोम'

---

१. हिन्दी-कन्नड़ समान शब्दावली (सुशीला पी० उपाध्याय), सन् १९७३, सीरीज सं० १

हिन्दी-मलयालम समान शब्दावली (श्यामला कुमारी), सन् १९७६, सीरीज सं० २

हिन्दी-तमिल समान शब्दावली (राजाराम सुब्बैया), सीरीज सं० ३

हिन्दी-तेलुगु समान शब्दावली (जे० वेंकटेश्वर शास्त्री), सन् १९८०, सीरीज सं० ४

हिन्दी-कश्मीरी समान शब्दावली (जवाहरलाल हंडू), सन् १९७५, सीरीज सं० ५

शेष भाषाओं की समान शब्दावली तैयार है, पर प्रकाशन नहीं हुआ। इसके अतिरिक्त प्रत्येक भाषा की रिकॉल शब्दावली भी तैयार की गई है।

दो भाषाओं की शब्दावली का तुलनात्मक विश्लेषण कई आधारों—स्रोत, उच्चारण, वर्तनी, अर्थ पर हो सकता है। ये सभी आधार समानता अथवा भिन्नता लिये हो सकते हैं।

दो भाषाओं की शब्दावली की तुलना समान स्रोत के आधार पर ही की जानी चाहिए। संयोग से दो भाषाओं में समध्वनि, समवर्तनी के दो शब्द हो सकते हैं जो अर्थ में नितान्त भिन्न हों। इन शब्दों की समानता मात्र ऊपरी है। समस्रोत की शब्दावली की तुलना निम्नलिखित दृष्टि से की जा सकती है—

(क) उच्चारण

(ख) वर्तनी

(ग) अर्थ

प्राय: देखा जाता है कि समान स्रोत के शब्दों का उच्चारण भिन्न हो जाता है और यह उस भाषा की प्रकृति के अनुसार स्वाभाविक भी है। जब उच्चारण स्थिर हो जाता है तो वर्तनी भी भिन्न लिखी जाने लगती है। समान उच्चारण व वर्तनी होते हुए भी अर्थ में भिन्नता हो सकती है। देखा जाए तो ऐसे शब्दों के प्रयोग में विशेष सावधानी रखनी चाहिए जो समरूप होते हुए भी अर्थ में पर्याप्त भिन्न हों। लाडो ने इस कोटि के शब्दों को भ्रामक शब्द कहा है उनको 'अचूक भड़कीले फन्दे' कहा है।

समान अर्थ में प्रचलित शब्दों में लिंग-भेद भी संभव है। सांस्कृतिक समानता व भिन्नता की दृष्टि से भी दो भाषाओं की शब्दावली ली जा सकती है।

समान अर्थ वाली शब्दावली द्वितीय भाषा की शिक्षण सामग्री में विशेषत: पहले लेनी चाहिए। मेरा ऐसा विचार है कि जिस क्षेत्र में द्वितीय/तृतीय भाषा के रूप में हिन्दी को पढ़ाना है उसके लिए पाठ्य सामग्री का निर्माण उन दोनों की समान शब्दावली तथा हिन्दी की बेसिक शब्दावली को लेकर करना चाहिए। प्रारम्भ में इस विधि से काफी समस्याओं से बचा जा सकेगा।

क्षेत्रीयता के आधार भी शब्दावली को निश्चित किया जा सकता है। दक्षिण की भाषाएँ-तमिल, तेलुगु, मलयालम तथा कन्नड़ भाषा-भाषियों की

शब्दावली की समस्याएँ उत्तर में पूर्वांचल की असमिया, बंगला और उड़िया बोलने वालों की समस्याओं से भिन्न हैं।

अब एक क्षेत्रीय भाषा की शब्दावली तथा हिन्दी की शब्दावली की समानता पर विचार किया जाएगा।

हिन्दी-गुजराती

हिन्दी और गुजराती भारतीय आर्य भाषा परिवार से सम्बन्धित होने के कारण तो निकट है ही, पर सांस्कृतिक तथा भाषायी आदान-प्रदान के कारण पर्याप्त निकट है। हिन्दी की एक प्रमुख उपभाषा तथा साहित्यिक दृष्टि से अत्यंत समृद्ध भाषा-ब्रजभाषा हिन्दी क्षेत्र तथा गुजरात को एकजुट किये हुए हैं क्योंकि श्रीकृष्ण मथुरा से चलकर द्वारिका में बसे। इस पर पृथक् से कह दिया गया है। हिन्दी एक विशाल प्रदेश की भाषा होने के साथ-साथ भारत की राजभाषा और सम्पर्क भाषा भी है। स्वयं गुजरात राज्य ने केन्द्र के साथ इस भाषा को पत्राचार के लिए स्वीकार किया है। 'गुजराती' का विकास गुर्जर अपभ्रंश से माना जाता है। वस्तुतः यह अपभ्रंश गुजराती-राजस्थानी या कहें गुजरात-मेवाड़ क्षेत्र की थी जिसमें कालान्तर में सौराष्ट्र और कच्छ भी सम्मिलित कर लिये गए। देखा जाए तो गुजराती-राजस्थानी का मिला-जुला रूप पन्द्रहवीं शताब्दी तक मिलता है। जिन जातियों ने उत्तर से आकर पाँचवीं-छठीं शताब्दी में यहाँ प्रवेश किया उनमें से गुर्जर भी एक थी। राजस्थान होते हुए यह यहाँ आकर बसे। यह भी दोनों क्षेत्रों में साम्य का बहुत बड़ा कारण है। बारहवीं से सोलहवीं शती तक गुजरात-मारवाड़-राजस्थान में प्रचलित भाषा के स्वरूप को डॉ० टेसीटेरी ने 'प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी' कहा है और श्री नरसिंह राव देवरिया ने 'अंतिम अपभ्रंश' की संज्ञा दी है। श्री के० का० शास्त्री गुर्जर अपभ्रंश को ही प्राचीन गुजराती मानते हैं। यहाँ गुजराती का उद्भव और विकास स्पष्ट करना उद्देश्य नहीं है, बस इस ओर संकेत करना मात्र है कि दोनों भाषाओं में ऐतिहासिक दृष्टि से इतनी अधिक निकटता है कि पं० चन्द्रधर शर्मा गुलेरी ने हेमचन्द्र को व्याकरण के कुछ अंशों के आधार पर 'पुरानी हिन्दी' को उत्तरकालीन अपभ्रंश से इतर भाषा की मात्र कल्पना ही नहीं की वरन् उसका पृथक् अस्तित्व सिद्ध किया। गुजराती-हिन्दी के इस पारस्परिक सम्बन्ध को अब न केवल ऐतिहासिक संदर्भ में हेमचन्द्र के ग्रन्थों के आधार पर देखा जा सकता

है, वरन् आवश्यकता है कि कोई उत्तरकालीन ग्रन्थों[1] का तत्कालीन हिन्दी साहित्य के ग्रन्थों से तुलनात्मक अध्ययन करे। भाषिक साम्य की विलक्षण सामग्री इन ग्रन्थों में भरी पड़ी है। अब ये सभी ग्रन्थ 'गुर्जर रासावली' शीर्षक से प्रकाशित हैं।

उक्त विवेचन से इतना स्पष्ट हो चुका है कि दोनों भाषाएँ भगिनी भाषाएँ हैं। ऐसी स्थिति में दोनों भाषाओं में अधिक साम्य दृष्टिगोचर होता है। दोनों की प्रकृति व प्रवृत्ति में पर्याप्त समानता है। दोनों भाषाओं में सभी दृष्टियों से अद्‌भुत साम्य है। समस्रोतीय शब्दावली में अरबी-फारसी तथा अंग्रेजी की बहुत बड़ी संख्या में शब्दावली समान है। शब्दावली की संख्या सहस्रों में है। भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय की हिन्दी-गुजराती की समान सूची शिक्षा मंत्री के सचिव श्री मोहम्मद अजमल खाँ के प्रयत्नों से तैयार हुई और प्रकाशित हुई जिसमें लगभग पाँच हजार शब्द हैं।

कुछ तुलनात्मक शोध कार्य भी हुए हैं, जैसे पश्चिमी भोजपुरी और गुजराती की क्रियाएँ (डॉ० रामकुँवर सिंह)। डॉ० रजनीकान्त जोशी[2] ने यह अनुभव किया कि कुछ शब्दावली समान होते हुए भी अर्थ की दृष्टि से भिन्न है। हिन्दी का 'समाज' शब्द—मिलना, एकत्र होना, संघटित, संस्था आदि अर्थों में प्रयुक्त होता है जब कि गुजरात में समुदाय, मंडली, सभा, सम्प्रदाय आदि अर्थों में। संस्कृत का 'राग' शब्द हिन्दी में प्रेम के अर्थ में प्रयुक्त होता है तो वही बंगाली, मराठी में 'क्रोध' के अर्थ में व्यवहृत होता है और गुजराती में 'प्रेम' के साथ दूसरे अर्थ में भी। लेखक ने गहराई में जाकर अपनी शब्द-सूची को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया—

---

१. पंचपंडवचरित रासु (१६वीं शताब्दी)
   विराटपर्व (१६०४ ई०)
   नेमिनाथ फागु (१६वीं शताब्दी)
   चिहुंगति चउपई (१५४६ ई०)
   विद्याविलास पावडउ (१५४६ ई०)

२. हिन्दी-गुजराती की समानस्रोतीय शब्दावली—डॉ० रजनीकांत जोशी, हिन्दी साहित्य परिषद्, अहमदाबाद, १९८५।

१. हिन्दी-गुजराती के समान स्रोतीय भिन्नार्थी शब्द—

	हिन्दी	**गुजराती**
कातर	दु:खी, बेचैन	कैंची
ओला	वर्षा के साथ शीत में गिरने वाल बर्फ के टुकड़े	हरे भुने हुए चने

२. हिन्दी-गुजराती के समोच्चरित, समानार्थी **लिंग भेद** वाले शब्द—

अग्नि	पुं०	स्त्री
घबराहट	स्त्री	पुं०

३. हिन्दी-गुजराती के समानार्थी किन्तु ध्वनि में साधारण अंतर—

अँधेरा	पु०	अंधारुम्
कमल	पु०	नपुं०

४. हिन्दी-गुजराती के समोच्चरित एवं भिन्नार्थी लिंग भेद वाले—

वट	बरगद (पु०)	प्रतिज्ञा (स्त्री)
वार	प्रहार (पु०)	देर (स्त्री)

५. हिन्दी-गुजराती के समानार्थी किन्तु ध्वनि में सामान्य अंतर वाले—

अमानत	अमानत	अमानत
किवाड	किवाड़	कमाड

६. गुजराती-हिन्दी के समानार्थी किन्तु ध्वनि में सामान्य अन्तर वाले—

अचंभा	अचंबो
गुंजाइश	गुंजाश

संस्कृत, अरबी-फारसी और अंग्रेजी के अतिरिक्त अन्य कई भाषाओं के तद्भव-तत्सम शब्दों का भंडार है।

धरम (धर्म), करम (कर्म), शरम (शर्म) जैसे तद्भव तथा केश, द्वार, अमीर, आवाज, आफिस, किस्मत, कारीगर, स्टेशन, हज़ामत, दोस्त आदि सहस्रों शब्द समान हैं। इसके ठीक विपरीत गुजराती की शब्दावली हिन्दी की उपभाषाओं में विद्यमान है। उदाहरणार्थ गढ़वाली-गुजराती की कुछ शब्दावली ली जा सकती है—

गुजराती	गढ़वाली
बा, अई	बई
नानो	नौना
बहार (भैर)	भैर (बाहर)
वल्यु	वल्यु (इस तरफ का)
पल्यु / पेली तरफ	पल्यु (उस तरफ का)
माथे	मथे (ऊपर)
छ, छूं	छ (है), छौं (हाँ)
तवारी	तवारी (उस समय)
कबारी	कबारी (कब)
पाणी	पाणी
भौत	भौत (बहुत)
नसो	नसो (भागना)
बेन	बैण (बहिन)
औच्छव	उच्छव (उत्सव)
पोर	पौर (पर के साल)
अगाड़ी	अगाड़ी (आगे)
पिछाड़ी, पछाड़ी	पिछाड़ी (पीछे)
हेठक	हेठी (नीचे)
तमे	तमे (आप, तुम)
चोमासु	चौमासु (बरसात)
गामडिया	गावडिया (ग्रामीण)
जौल / जोड़िया	जोल्या (एक ही समय पैदा हुए बच्चे)
चोपास	चौपास (चारों तरफ)

इस दृष्टि से हिन्दी की सभी उपभाषाओं के साथ भी साम्य-वैषम्य देखना उचित होगा।

यह सर्वविदित है कि फोर्ट विलियम कालेज में हिन्दी (खड़ी बोली) पढ़ाने के लिए लल्लू जी लाल गुजराती थे। सन् १८१० में इंडिया गजट प्रेस, कलकत्ता से प्रकाशित 'लताइफी हिन्दी' में शब्द सूची के अनन्तर लिखा गया है—

श्री लल्लूजीलाल कवि ब्राह्मण गुजराती

हिन्दी-मराठी

हिन्दी-मराठी की समान शब्दावली पर सरकारी संस्थाओं के अतिरिक्त कई शोधार्थियों ने शोधकार्य सम्पन्न किया है जिनमें विशिष्ट नाम हैं, डॉ० बी० बी० पाटिल, डॉ० राजनारायण मौर्य तथा डॉ० रामप्रकाश सक्सेना। डॉ० पाटिल को पूर्णे विश्वविद्यालय से इस कार्य पर सन् १९७१ में और डॉ० कृष्ण मंगल सर्वे को 'संस्कृत तद्भव शब्दावली' पर १९७२ ई० में पी-एच० डी० की उपाधि प्रदान की गई। मराठी के संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि आगत शब्दावली के संदर्भ में कई कार्य सम्पन्न हुए—

पारसी-अंग्रेजी (डॉ० ज्ञानदेव भीम जी सावंत) १९७३ ई०

हिन्दी तथा मराठी दोनों समृद्ध भाषाएँ हैं। फिर जैसा कहा जा चुका है कि विदेशियों से सीधे सम्पर्क के कारण पुर्तगाली, फ्रांसीसी और अंग्रेजी शब्द भी बड़ी संख्या में हैं, जैसे, साबुण, हापुस, पगार, कम्पू, राशन, स्कूल, मास्टर, कोर्ट आदि। दकनी से सीधा सम्बन्ध होने के कारण अरबी-फारसी की शब्दावली इंसाफ, हुशार आदि। हिन्दी तथा मराठी के समान रूप वाले शब्दों को भी कई कोटियों में बाँट सकते हैं।

(क) वर्तनी तथा उच्चारण दोनों में समानरूपी

(ख) वर्तनी में समानरूपी किन्तु उच्चारण में किंचित् भिन्नता

(ग) उच्चारण में समानरूपी किन्तु वर्तनी में भिन्नता।

कुछ समान शब्दों के कह सकते हैं—

कंठा, कसर, कदर, काँख, कसरत, काँच, काज, काजू, कुटुंब, कोटि, कपाट, कर्म, कर्ण, कौतुक, कलम, खाट, खिलाड़ी, खटका, खरबूजा, खबर, खबरदार, खंदक, खोटा, खाली, खिन्न, खादी, खाकी, खानदान, खुशी, गुण, गणना, गर्जना, गजरा, गदा, घटना, घनघोर, घंटा, घोर, घात, घाव, घेर, घनिष्ठ, घाघरा, घर्षण, गम्भीर, गति, ग्राहक, गौड, गाँव, गर्म, ग्लानि आदि सहस्रों शब्द समान हैं और समान वर्तनी में ही दोनों भाषाओं में प्रयुक्त होते हैं।

कुछ समान शब्द होते हुए भी मराठी की विशिष्ट ध्वनि के साथ मराठी में प्रयोग में आते हैं—

खोल (खोळ), गला (गळा,) घोटाला (घोटाळा), कली (कळी)

कंजूस (कंजूष), केसर (केशर)

कठिन (कठिण), खान (खाण)

कवायद (कवायत), खुशामद (खुशामत)

कसौटी (कसोटी)

कशीदा (कशिदा)

दोनों भाषाओं में (ब) के स्थान पर 'व' तथा 'व' के स्थान पर 'ब' का प्रयोग मिलता है। मराठी में मूर्द्धन्य ध्वनियाँ—ट, ठ, ड, ढ, ण, ष, ळ का विशेष उच्चारण मिलता है। दीर्घता के स्थान पर ह्रस्वता में भी अन्तर मिलता है।

कुछ समान शब्द ऐसे भी हैं जो एक भाषा में दो या दो से अधिक अर्थ रखते हैं। उन सभी अर्थों में से कुछ अर्थ दूसरी भाषा में भी मिलता है—

१. **मान**—मराठी में तीन अर्थ—(क) मान, सम्मान, आदर —पुंल्लिग
(ख) मान, मानदंड, परिमाण—स्त्रीलिंग
(ग) गरदन —नपुंसक

नोट : हिन्दी में तीसरा अर्थ बिल्कुल नहीं है।

२. **घड़ी**—मराठी में अल्पसमय, २४ मिनट का समय, हिन्दी में (१) घड़ी तथा (२) अल्पसमय दो अर्थ हैं।

हिन्दी कोंकणी

कोंकणी भाषा गोआ तथा अंशतः कर्नाटक तथा महाराष्ट्र, केरल के समुद्र तटवर्ती क्षेत्र में बोली जाती है। विभिन्न क्षेत्रों की कोंकणी पर कन्नड, मराठी और मलयाळम, का रंग है। कोंकणी में कन्नड, तेलुगु, तमिल, मलयालम मराठी आदि पड़ोसी भाषाओं के शब्द सहज रूप में आ गये हैं। हिन्दी, संस्कृत, गुजराती, बंगला, कश्मीरी भाषा तक के शब्द प्रचुर मात्रा में हैं। सुप्रसिद्ध भाषाविद् डॉ० सुमित्र मंगेश कत्रे ने कोंकणी पर शोध कार्य किया है।

यहाँ नमूने के तौर पर कुछ शब्दावली ली जा रही है—

हिन्दी	कोंकणी	हिन्दी	कोंकणी
पेंठ	पेंट	घूंट	घोंट
जेब-खीसा	किसो	पेंदी	पोंद
लाज	लाज	स्वभाव	स्वभाव
दोपहर	दैपर	गींद	न्हीद
डोरी	दोरी	ढुक्कन	धाकण
गाँव	गाँव	काँटा	काँटो
नींबु	लिंबु	सींग	शींग
मोर	म्होर	घाव	घाय
		गोरा	गोरी

दो भिन्न-भिन्न परम्पराओं से जुड़े रहने पर भी दोनों भाषाओं के प्रयोगों तथा वाक्यों में काफी समानता मिलती है।

हिन्दी-गुजराती-मराठी

गुजराती-मराठी में पड़ोसी भाषाएँ होने के कारण सर्वाधिक समान शब्दावली है। यह बात दूसरी है कि एक ही शब्द भिन्न-भिन्न भाषाओं में एकाधिक अर्थों में प्रयुक्त होता हो—

	हिन्दी	गुजराती	मराठी
विभिन्न अर्थ	अँधेरा	अंधारु	अंधार
	(१) अंधकार	अंधेरा	अंधेरा
	(२) नैराश्य, उदासीनता	अज्ञान	नैराश्य
	(३) प्रकाशरहित	गुप्तता	प्रकाशरहित
	(४) छायासम भाव		

यही क्रियारूपों में भी है—

	हिन्दी	गुजराती	मराठी
	उगना	ऊगवुं	उगणें
विभिन्न अर्थ	(१) उदय होना	उदय होना	उदय होना
	(२) उगना-उपजना	उगना	उगना
	(३) अंकुरित होना	अंकुरित होना	अंकुरित होना
	(४) जमना	(मन में) उठना	
		फलदायी होना	

नोट : लक्षणा, व्यंजना से हिन्दी में भी कई अर्थच्छटाएँ और हो सकती हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि हिन्दी, गुजराती व मराठी के उन शब्दों के विभिन्न अर्थों में समानता है क्योंकि ये सब शब्द आसरा (हिन्दी), आसरा (गुजराती), आसरा (मराठी) अन्ततः संस्कृत शब्द 'आश्रय' से विकसित हुए हैं। सांस्कृतिक एकता की दृष्टि से इस समान शब्दावली का महत्त्व निर्विवाद है।

मराठी ही नहीं, काफी लम्बे समय तक गुजरात का सम्बन्ध कर्नाटक से भी रहा। सातवीं शताब्दी से चौदहवीं शदी ई० तक के सम्बन्धों पर डॉ० शारदा श्रीनिवास ने शोधकार्य किया है। दोनों भाषाओं के साहित्य में जैन, शैव वैष्णव भावधारा का व्यापक प्रभाव पड़ा है।

हिन्दी-उर्दू

हिन्दी-उर्दू में तो इतना अभेद है कि हिन्दी वाले तो उर्दू को हिन्दी की एक शैली स्वीकार करते हैं। वहाँ राहुल जी ने स्पष्ट घोषणा की थी, "उर्दू को बहुत से लोग हिन्दी का प्रतिपक्षी समझते हैं, जो गलत है। हम हिन्दी वाले उसे हिन्दी की एक शैली मानते हैं। वह समय दूर नहीं है जब उर्दू का समस्त श्रेष्ठ साहित्य नागरी अक्षरों में आकर सबके लिए सुलभ हो जाएगा।" (मसूरी, दिनांक ३.६.५८) आज गत तीस वर्षों में उर्दू का पर्याप्त साहित्य नागरी लिपि में उपलब्ध हो गया है और बराबर आ रहा है। इसमें निरन्तर वृद्धि हो रही है।

हिन्दी के साहित्यकार तो मानते ही हैं पर उर्दू के सुप्रसिद्ध आलोचक प्रो० एहतेशान हुसैन मानते हैं कि "हिन्दी के प्रचलित रूप में जिस हिन्दी का प्रयोग किया जाता है उसमें और उर्दू में व्याकरण की दृष्टि से कोई बड़ा अन्तर नहीं है।"

सभी भारतीय भाषाओं की तुलना में उर्दू हिन्दी से सबसे अधिक निकट है। प्रो० हुसैन के अनुसार "यदि उर्दू या किसी अन्य भाषा के शब्द, वाक्य, शैली के कुछ गुण हिन्दी की समृद्ध कर सकते हैं तो उन्हें खुले दिल से स्वीकार करना चाहिए। यही बात संविधान की धारा ३५१ की पूर्ति करेगी।"

(हिन्दी की प्रकृति और विकास, पृ० १२६)

उर्दू के शब्द-समूह विशेषत: ध्वनियों में से हिन्दी ने बहुत कुछ ग्रहण किया है और उर्दू ने हिन्दी से। दोनों भाषाओं ने परस्पर एक-दूसरे से बहुत लिया है, साथ ही एक ही परिवार की होने के कारण दोनों में अद्‌भुत समानता है।

इलाहाबाद विश्वविद्यालय में सम्पन्न हुई 'हिन्दी की प्रकृति और विकास' शीर्षक संगोष्ठी में (सन् १९६६) स्मृतिपत्र भी तैयार किया गया जिसमें उर्दू पर भी विचार किया गया है। आज पच्चीस वर्ष बाद भी अपने स्थान पर समस्या है अतएव उद्धृत करना चाहता हूँ।

"उर्दू मूलत: हिन्दी है। उर्दू की फारसी लिपि के कारण ही कठिनाई है। इस शैली को हिन्दी में प्रमाणित मानने के लिए उसका देवनागरी लिपि में लिखा जाना आवश्यक है। अतएव टकसाली पुराने लेखकों को प्रकाश में लाना और उर्दू शैली को हिन्दी साहित्य में स्वीकार्य बनाने के लिए देवनागरी लिपि का प्रयोग आवश्यक है।"

दो दशक पूर्व जब हिन्दी साहित्य के बृहद् इतिहास के अद्यतन खंड का मैंने सम्पादन किया था तो पहली बार उसमें उर्दू साहित्य का इतिहास का खंड भी लिखवाया गया। इस अंश के लेखक हैं, डॉ० मासूम रजा राही जो आज दूरदर्शन के सर्वाधिक सफल धारावाहिक 'महाभारत' के संवाद लिख रहे हैं। संवादों की आशातीत सफलता के पीछे उसका लेखन है। संवादों में सजीवता, सरलता, सटीकता आदि गुण इस शैलीकार के कारण हैं।

हिन्दी-उड़िया-असमिया-बंगला

पूर्वांचल की इन तीनों भाषाओं में परस्पर प्रगाढ़ सम्बन्ध है, जिसका विस्तृत विवेचन डॉ० सुनीति कुमार चटर्जी ने किया। बाद में डॉ० देवीप्रसन्न पट्टनायक[1] ने इस दिशा में कार्य किया।

हिन्दी-उड़िया—भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय की सन् १९५८ में प्रकाशित सूची के अतिरिक्त दो कार्य इस दिशा में विशेष उल्लेखनीय हैं।

१. हिन्दी एवं उड़िया वोकेबिल्स—डॉ० अपन्ना प्रधान[2], सन् १९५८ वस्तुत:

---

१. डॉ० पट्टनायक, देवी प्रसन्न—Controlled Historical Reconstruction of Oriya, Assamese, Bengali and Hindi, 1966

२. डॉ० प्रधान, अपन्ना—Hindi and Oriya Vocables, 1985.

डॉ० प्रधान ने कलकत्ता विश्वविद्यालय से बहुत पहले इस विषय पर शोधकार्य सम्पन्न किया था जिसका यह संक्षिप्त रूप प्रकाशित हुआ जिसमें संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, संख्यावाचक शब्द, अव्यय आदि का विवेचन किया गया है।

२. समान स्रोत और भिन्न वर्तनी की शब्दावली ओड़िया-हिन्दी, हिन्दी-ओड़िया (एक शोध परियोजना)

—डॉ० विजयराघव रेड्डी

जैसा नाम से स्पष्ट है, यह सूची ओड़िया-हिन्दी तथा हिन्दी ओड़िया दोनों रूपों में दी गई है। इसमें लगभग दो हजार शब्द हैं। इस कार्य के प्रारम्भ में बत्तीस पृष्ठ की लम्बी भूमिका है।

हिन्दी-असमिया

भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय की सन् १९५८ में प्रकाशित सूची के अतिरिक्त डॉ० विजय राघव रेड्डी की शोध-परियोजना महत्त्वपूर्ण है।

इस सूची में लगभग दो हजार शब्द सम्मिलित किये गये हैं जिसमें से समान स्रोत और भिन्न वर्तनी की शब्दावली असमिया-हिन्दी और हिन्दी-असमिया (एक शोध परियोजना)

संस्कृत, अरबी-फारसी तथा अंग्रेजी शब्दों का प्रतिशत क्रमशः ५७.९, २७.१ तथा १५.०० प्रतिशत हैं। इस कार्य के प्रारम्भ में नब्बे पृष्ठों की लम्बी भूमिका है। कुछ उदाहरण पर्याप्त होंगे—

अ-आ	मक्खी	माखी
	अंडा	आंडा
	हथोड़ी	हातुरी
	फन्दा	फान्दा
इ-ई-ए	इक्कीस	एकैश
	इलायची	ऐलाची
	लीची	लेचु
	बीमार	बेमार

ई-इ	तारीख	तारिख
	बीड़ा	बिरा
	ठीक	ठिक
	बीस	बिश

हिन्दी तथा असमिया के समान शब्दों की स्वनिमिक अनुरूपता (१९८० ई०) पर शोधकार्य श्री मोहिन्दर पाल अनेजा ने किया। श्री अनेजा ने इस दृष्टि से हिन्दी तथा सभी भारतीय भाषाओं के संदर्भ में सीरीज के रूप में यह परियोजना पूरी की।

हिन्दी-बंगला

भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय द्वारा प्रकाशित सूची इस दिशा में महत्त्वपूर्ण है। दोनों भाषाओं की शब्दावली उपलब्ध है जिसमें आगत शब्दावली के योग से यह संख्या बढ़ जाती है। बंगला साहित्य से हिन्दी में हुए पर्याप्त अनुवाद कार्य में इस दिशा में विशेष योग दिया है। बंगाली ने हिन्दी को, हिन्दी ने बंगाली को इतना अधिक दिया है कि यह पृथक् से ही भाषामाला का विषय बन सकता है। जस्टिस शारदाचरण मित्र की संस्था 'एक लिपि विस्तार परिषद्, कलकत्ता' एक ऐसी संस्था थी जिसे कलकत्ते के विशिष्ट हिन्दी विद्वानों तथा साहित्यकारों का सक्रिय सहयोग प्राप्त था।

इस दिशा में कुछ कार्य विशेष उल्लेखनीय हैं—

१. अर्थविज्ञान की दृष्टि से हिन्दी और बंगला शब्दों का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ० राधाकृष्ण सहाय)

२. हिन्दी साहित्य बंगीय भूमिका—डॉ० कृष्ण बिहारी मिश्र, कलकत्ता, १९८३

३. बंगला पर हिन्दी का प्रभाव—डॉ० ब्रह्मानन्द।

हिन्दी तथा बंगला-असमिया-उड़िया

भारत के पूर्व की इन भाषाओं में अद्‌भुत समानता है। इन भाषाओं का विकास-स्रोत एक ही है जिसमें निकटता तथा समानता स्वाभाविक है। शब्दावली की दृष्टि से बहुत अधिक समानता। किसी भी भाषा की प्रकृति को

समझने के लिए 'सर्वनाम' भी अधिक सहायक होते हैं।[1] इसके पीछे मात्र कारण यह है कि सभी मूल भाषा से विकसित होते हैं और अपेक्षाकृत इनकी संख्या काफी सीमित है। उदाहरणार्थ दूरवर्ती संकेतवाचक सर्वनाम 'वह' लिया जा सकता है। प्रायः हम भूल जाते हैं कि हिन्दी की उपभाषाओं / बोलियों में 'ओ', 'वो', 'वय', 'वन', 'ऊ' (हऊ) रूप भी प्रचलन में हैं। पूर्वी बोलियों में 'वय', 'वन्', ओन' 'उहाँ का' आदि रूप प्रचलित हैं।

प्रश्नवाचक सर्वनाम तो सर्वत्र एक जैसे हैं—

	हिन्दी	**बंगला**	**असमिया**	**उड़िया**
अविकारी	कौन, क्या	काहा, के, कौन	कि, किह, किहे	किए, कोउँ,
विकारी	किस	का, काँ (हा)	कोन, का	के, काहा

हिन्दी-मणिपुरी

यद्यपि 'मणिपुरी' को आर्य परिवार की भाषा नहीं माना जाता फिर भी भारतीय संस्कृति का अत्यधिक प्रभाव होने के कारण मणिपुर का ब्रजप्रदेश और विशेषतः राधाकुंड से सुदृढ़ सम्बन्ध है। कलकत्ता विश्वविद्यालय से श्री लाइरेल सिंह ने **'हिन्दी-मणिपुरी शब्दावली'** पर शोधकार्य भी किया है। इधर मणिपुर विश्वविश्रालय में हिन्दी विभाग के प्रोफेसर डॉ० जगमल सिंह ने मणिपुरी भाषा और संस्कृति पर पर्याप्त कार्य किया है।

मणिपुर की भाषा तथा संस्कृति से सम्बन्धित इधर कुछ महत्त्वपूर्ण पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं—

मणिपुर : विविध सन्दर्भ—सं० देवराज
मणिपुर : भाषा और संस्कृति—सं० देवराज

---

१. किसी भी भाषा में सर्वनाम रूप बहुत कम हुआ करते हैं जबकि उस **भाषा के समूचे वाक्य-विन्यासों का गठन** सर्वनामों के सहयोग से सम्पन्न हो जाता है। उनके वाक्यों में क्रियापदों के विभिन्न रूप भी सर्वनाम पदों के साहचर्य में आसानी से स्पष्ट हो जाते हैं। अतः किसी भी भाषा की प्रकृति को समझने में उसके सर्वनाम अधिक सहायक होते है।

(**पूर्वोत्तर भारतीय भाषाओं के सर्वनाम** डॉ० महेन्द्रनाथ दुबे, सन् १९८०, पृ० १४)

मणिपुर की संस्कृति —डॉ० जगमल सिंह

संस्कृति सम्बन्धी इन पुस्तकों के अतिरिक्त 'राजभाषा हिन्दी' के सम्बन्ध तथा प्रचार-प्रसार में भी पर्याप्त कार्य सम्पन्न हुआ है—

—राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से मणिपुर में हिन्दी की भूमिका
—मणिपुर में संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी
—मणिपुर में देवनागरी लिपि की प्राचीनता एवं महत्त्व
—मणिपुर की हिन्दी प्रचारक संस्थाएँ
—मणिपुर में हिन्दी प्रचार-प्रसार की समस्याएँ
—मणिपुर में हिन्दी लेखन की समस्याएँ
—मणिपुर की हिन्दी प्रदेश से अपेक्षाएँ

संविधान की अष्टम अनुसूची में स्वीकृत न होते हुए भी 'मणिपुरी' मणिपुर राज्य की राजभाषा है जिसकी ओर प्रशासन विशेष ध्यान दे रहा है।

दो भिन्न भाषा परिवार की भाषाएँ भी सांस्कृतिक दृष्टि से जुड़े रहने के कारण कितनी अधिक सम्बन्धित हो जाती हैं इस बात का प्रत्यक्ष उदाहरण हिन्दी-मणिपुरी हैं। मणिपुरी भाषा भी काफ़ी प्राचीन है। मणिपुरी भाषा में लिखा गया साहित्य विश्व की विकसित भाषाओं के साहित्य के समान ही है। मणिपुरी भाषा में गद्य, पद्य और चम्पू साहित्य लिखा गया है।

सांस्कृतिक धरातल पर यह इतना अधिक जुड़ा है कि जन्माष्टमी त्यौहार भी बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है।

दुर्गम पर्वतों से घिरा यह भू-भाग कला-संस्कृति की साधना में लगा रहा। अपूर्ण संश्लिष्ट संस्कृति इस प्रदेश की है। बंगाल से वैष्णव गौडीय भक्ति भावना ग्रहण थी। महाराजा भाग्यचन्द्र ने सन् १७६८ में अपने जन्मस्थान पर इसको पुनर्जीवित किया। ब्रज संस्कृति से रास लिया किन्तु उसको नये रूप 'मणिपुरी रास' के रूप में पुनः फैलाया। आज भी मणिपुर निवासियों के लिए ब्रजभूमि स्थित राधाकुंड सर्वस्व है। राधाकुंड में जनरल थाड्ला की समाधि इसका मूर्तिमान रूप है। ब्रज की कहावत 'सात वार नौ त्योहार' वस्तुतः मणिपुर में चरितार्थ होता है। महाराज गरीब निवाज जी की पुत्री ने अठारहवीं शती के प्रारम्भ में वृन्दावन की यात्रा थी।

मणिपुर, विश्वविद्यालय, कांचीपुर के प्रोफेसर डॉ० जगमल सिंह ने मणिपुर में राजभाषा की प्रगति शीर्षक पुस्तक में विस्तार से हिन्दी के सम्बन्ध को रेखांकित किया है। अठारहवीं शताब्दी में ही मणिपुर में बिहार से भोजपुरी भाषा-भाषी आये थे। युवराज टिकेन्द्र जीत सिंह हिन्दी लिखना-पढ़ना जानते थे। एक शताब्दी पूर्व भी पत्राचार हिन्दी में होता था। सन् १८६० में महाराज सूरचन्द्र ने वृन्दावन की यात्रा की थी जो सिद्ध करता है कि उन्हें हिन्दी-ब्रजभाषा का अच्छा ज्ञान था।

मणिपुरी भाषा में आगत हिन्दी शब्दावली पर्याप्त मात्रा में है। इस प्रकार मणिपुरी हिन्दी के साथ-साथ हिन्दी की उपभाषाओं—ब्रज तथा भोजपुरी, नेपाली तथा बंगला से जुड़ी हुई है। दोनों भाषाओं की प्रगाढ़ता निरन्तर दृढ़ होती जा रही है। दोनों भाषाओं को जोड़ने का श्रेय ब्रज-संस्कृति को है क्योंकि राधा-कृष्ण को अपना आराध्य मानने वाले मथुरा-वृन्दावन के दर्शन करना अपना सौभाग्य मानते हैं जहाँ राधा-कृष्ण ने अपनी लीलाएँ सम्पन्न की थीं।

हिन्दी-नेपाली

भारत और नेपाल के भू-भाग अलग हैं पर आत्मा एक है। सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, धार्मिक दृष्टिकोण बहुत कुछ समानता का मूलाधार है। प्राचीन काल से नेपाल का भारत से घनिष्ठ सम्बन्ध है। सांस्कृतिक बंधन ही इसका मूलभूत आधार रहा है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र. में नेपाल का स्पष्ट विवरण मिलता है। नेपाली पर प्रो० टर्नर का 'नेपाली कोश' अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। उनके इस कार्य से यह स्पष्ट होता है कि किस प्रकार नेपाली भारतीय आर्यभाषाओं से सीधे जुड़ी हुई है। अधिकांश विद्वान नेपाली को हिन्दी की ही एक उपभाषा स्वीकार करते हैं। पहाड़ी भाषा वर्ग को जिन तीन भागों में—पश्चिमी, मध्य, पूर्वी में बाँटा गया है उनमें से पूर्वी पहाड़ी का रूप ही 'नेपाली' के रूप में सर्वमान्य है। आज भी सिक्किम में प्रमुख राजभाषा के रूप में नेपाली को मान्यता प्राप्त है। उत्तरी बंगाल में भी नेपाली का विशेष स्थान है। प्रो० टर्नर द्वारा प्रस्तुत 'नेपाली कोश' प्रकारान्तर से समस्त आर्य-भाषाओं का तुलनात्मक कोश है और भारतीय भाषाओं में. समान तत्त्व की दिशा में विश्वकोश है। बाद में प्रो० टर्नर ने ही 'आर्यभाषा कोश' कई खण्डों में प्रकाशित किया। हिन्दी और नेपाली दोनों भाषाओं में तत्सम,

तद्भव, देशी और विदेशी शब्द बड़ी संख्या में समान पाये जाते हैं। नेपाली में अरबी-फारसी के अधिकांश शब्द हिन्दी भाषा के माध्यम से प्रविष्ट हुए हैं। नेपाली में कुछ देशी शब्द भी हिन्दी से ही गये हैं। इन्हीं कारणों से नेपाली शब्द भंडार पर हिन्दी भाषा का व्यापक प्रभाव पड़ा। नेपाली की तुलना में हिन्दी अधिक वियोगात्मक भाषा हो गई है जिसके कारण जहाँ हिन्दी शब्दों के साथ कारक चिह्न प्राय: नहीं जुड़ते हैं वहाँ नेपाली के शब्दों जुड़ जाते हैं। हिन्दी तथा नेपाली[1] भाषाओं में समान रूप से तत्सम, तद्भव, देशी और विदेशी शब्दों का प्रतिशत क्रमश: ३०·४%, ५१·६%, ३·५% १४·५% है।

विदेशी शब्दों में विशेषत: अंग्रेजी से अनेक शब्द समान हैं, जैसे, कमान (कमांड), स्पंज, इस्पात, कमिटी; कारतूस, पादरी। अरबी-फारसी के अदालत, अमीर, इन्कार, किला आदि शब्द सर्वत्र हैं।

तद्भव शब्द तो सहस्रों हैं—

हवा, तसला, चितुवा (चीता), साथी, पत्ती, भट्टी, रेची (रेज़गारी), भुईं (भूमि), छोरी, बाड़ी, चाबी, बही, धनु, बाबू, ढाउँ (स्थान), गहू (गेहूँ), थैली (थैला), छोटो, दोहाई (दुहाई), बढ़ई, भाई, हसाई (हँसाई), गवाई (गवाही), गाई (गाय), जौ, घाउ (घाव), घिउ (घी), जिस (जी), भोक (भूख), वन्दूक, मुख, नास (नाक), बिख (विष), रुख (वृक्ष), गज, ब्याज, खाट, खोट, चोट, काठ, पीठ, कचकच, गाछ (वृक्ष), गठ, गोठ (गोष्ठ), कारण, ऋण, वेत, जात, हात (हाग), मित (मित्र), गाथ (गात), दुद (दूध), कुपथ, गंध, बाँध आदि।

हिन्दी-पंजाबी

पंजाबी का पश्चिमी रूप-लंहदा ही हिन्दी से पर्याप्त भिन्न है जो अब भारत में नहीं है। भारत में स्थित पंजाब की भाषा 'पंजाबी' पर भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय की शब्द सूची 'हिन्दी-पंजाबी' बहुत पहले ही प्रकाशित हो चुकी है।

---

१. हिन्दी एवं नेपाली भाषा (डॉ० सुरेन्द्रप्रसाद साह), किताव महल, १९८३, पृ० ७७।

इस प्रारम्भिक कार्य के अतिरिक्त **'हिन्दी-पंजाबी की समानार्थक शब्दावली'** पर आगरा से श्री जसवंत गुलाटी ने सन् १६६८ में शोध प्रबंध प्रस्तुत किया। पंजाबी की शब्दावली का हिन्दी से सीधा सम्बन्ध है।

पंजाबी-हिन्दी का पारस्परिक सम्बन्ध दोनों भाषाओं का कुल लोकोक्तियों को लेकर देखा जा सकता है। इसका सम्बन्ध कितना निकट है यह कुछ उदाहरणों से स्पष्ट होगा—

हिन्दी	**पंजाबी**
ऊँट के मुँह में जीरा	ऊँट दे मुह बिच जीरा
ऊँची दुकान फीका पकवान	ऊँची दुकान फिक्का पकवान
होनहार बिरवान के होत चीकने पात	होनहार बिरवान दे होद चीकने पात
खोदा पहाड़ निकली चुहिया	खोदरया पहाड़ निकली चूही
चोर की दाढ़ी में तिनका	चोर दी दाड़ी बिच तीना
लातों के भूत बातों से नहीं मानते	लत दा भुत गलों नाल नहीं मनदा
लोमड़ी के अंगूर खट्टे	लोमड़ी नूं अंगूर खट्टे

यह पारस्परिक सम्बन्ध कितना निकटतर है कि कभी-कभी अनुवाद की कोई आवश्यकता प्रतीत नहीं होती—

हिन्दी रूप (गगन गिल)	**पंजाबी रूप** (महेन्द्र कौर गिल)
अजीब आदत थी उस वृक्ष की	अजीब आदत सी उस रुख[1] की
× × ×	× × ×
उजड़े घर की हवा	उजड़े घर दी हवा
क्यों सुनसान राह पर चौंकती है	काहनुं सुनसान राहते चबकदीएं
हादसा अकेले नहीं घटता	हादसा कल्लियों नहीं वा परदा
वह तो भर बाजार में भी	ओह तां भरे बाजार विच दी
हो सकता है।	हो जां वै।

---

१. 'रुख' वृक्ष का ही तद्भव रूप है जो हिन्दी में भी पर्याप्त प्रचलन में है।

हिन्दी-कश्मीरी

कश्मीर तो प्राचीन काल से संस्कृत के मनीषियों-विचारकों का स्थल रहा है। नवीं शताब्दी से बारहवीं सदी तक कश्मीर में उत्कृष्ट कोटि का संस्कृत साहित्य लिखा गया।

भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय की सूची के अतिरिक्त **'हिन्दी-कश्मीरी समान शब्दावली'** पर कश्मीरी के विद्वान् तथा लोक साहित्य विशेषज्ञ डॉ० जवाहर हंडू (भारतीय भाषा संस्थान, मैसूर) ने कार्य किया जिसको संस्थान ने ही प्रकाशित किया। कश्मीरी की शब्दावली संस्कृत के इतनी निकट है कि जार्ज ग्रियसन द्वारा स्थापित मान्यता—कश्मीरी भाषा दरद गोत्रजा है—को सहज ही चुनौती दी जा सकती है। अब किसी ऐसे शोधार्थी की आवश्यकता है जो कश्मीरी से पूर्व की स्वतन्त्र अपभ्रंश की खोज करे।

हिन्दी	**कश्मीरी**
पुष्ट	पअठ
मोटा	व्यअठ
हुड्डी (हनु)	हुंगन्य
चूल्हा (चरु)	चोअर
पथ	वअथ
बर सामन का वस्त्र (वायुपट)	वावपट
जीभ (जिह्वा)	जिह्व
नभ	नभ

'हिन्दी-कश्मीरी' का व्यतिरेकी विश्लेषण डॉ० ओंकारनाथ कौल ने प्रस्तुत किया है। (शा|राजा—मई १९८७)

कश्मीरी की ध्वन्यात्मक प्रवृत्ति के अनुसार शब्दों के रूप परिवर्तित हो जाते हैं—

हिन्दी	कश्मीरी	
ऐनक	एनक	—स्वर का अभाव
औरत	अवरत	,,
सौ	सव	,,
मौन	मो न	—विशिष्ट स्वर
छल	छ़ल	—विशिष्ट ध्वनि
छाया	छ़ाया	,,
धन	दन	—महाप्राणता का लोप
ढोल	डोल	,,
घर	गर	,,
पढ़ना	पड़ना	— ,,
रात	राथ	—महाप्राणता
सात	साथ	
सूर	सूठ	
पाथ	पाथ्र	
अदरक	अदरख	

इस प्रकार औलाद, आदत, इजाजत, कीमत, कंटीन, कौम, किस्म, मिजा, चोट, झील, जान, जरूरत, टीम, ताकत, तमन्ना, तारीख, तबियत, दुनिया, दुकान, पैंसल, पतलून, फौज, बहार, मेज, मोटर, मुबारक, शाम, शाल, शबनम, सुबह, सैर, हवा, साइकिल, हड़ताल आदि सहस्रों आगत शब्दावली भी समान हैं।

दोनों भाषाओं में समरूपी और समानार्थी शब्दों के होते हुए भी सही लिंग में प्रयोग करना भी समस्या है।

हिन्दी-डोगरी

उत्तर पश्चिमी हिमालय की शिवालिक पहाड़ियों की गोद में आबाद पंजाब-हिमालय के मस्तक पर अर्धचन्द्र के रूप में विस्तीर्ण भूभाग कुछ पथरीला कुछ ठारकीला भूभाग जम्भू-काश्मीर के दक्षिण में स्थित है। डोगरी भारतीय आर्यभाषा परिवार की भाषा है जिसका विकास भी मराठी, बंगाली असमिया, उड़िया, गुजराती आदि अन्य भाषाओं की भाँति हुआ। अमीर

खुसरो ने लाहौर से कश्मीर तक के क्षेत्र को डोगरी भाषा प्रदेश कहा था। उससे बहुत पहले ह्वेनसांग ने टक्क देश का जिक्र किया था। रावी और चनाब के मध्यवर्ती देश को 'टक्क' कहा गया है। वस्तुतः यह पश्चिमी पहाड़ी की प्रतिनिधि बोली है। बहुत बड़े भूभाग को डोगरा-डुग्गर नाम दिया गया जिसके आधार पर इस प्रदेश की भाषा डोगरी कहलायी। जम्मू और चम्बा इसे राष्ट्रभाषा का पद प्राप्त रहा है और आज भी 'जम्मू कश्मीर' राज्य की तृतीय भाषा के रूप में इसकी मान्यता है। माना जाता है कि इस प्रदेश की दो झीलों सरूईंसर तथा मानसर के प्रदेश को 'द्विगर्त' कहा गया जो बिगड़कर 'डुग्गर' हो गया।

सुप्रसिद्ध भाषाविद् डॉ० सिद्धेश्वरी वर्मा ने डोगरी का पर्याप्त अध्ययन किया। वह डोगरी को स्वाधीन और सीमन्त बोली मानते हैं, जिसने 'भाषा' की मान्यता प्राप्त कर ली है।

डोगरी-हिन्दी की समान शब्दावली पर अभी कोई कार्य नहीं हुआ है। हाँ, डोगरी (हिन्दी) वाक्य-विन्यास पर अवश्य डॉ० वीणा गुप्त ने शोधकार्य सम्पन्न किया है।

कुछ वाक्य लेकर दोनों भाषाओं की समानता को देखा जा सकता है?

डोगरी	हिन्दी
बुआ दा नां जानकी हा।	बुआ का नाम जानकी था।
निक्की सारी गल्ती लेई त्रीणी सजा भुगतनी देई।	छोटी-सी भूल के लिए तिगुनी सजा भुगतनी पड़ी।
इक तीर जे साढ़े प्राण लेने दा जतन करी सकदा ए।	एक तीर यदि हमारे प्राण लेने का यत्न कर सकता है।
ओह् घड़ी घड़ी डिग्गी पौंदा हा।	वह बराबर गिर पड़ता था।

डोगरी के उक्त वाक्यों में बुआ, नाम, गल्ती, सजा, भुगतनी, तीर, प्राण, लेने, जतन, घड़ी-घड़ी शब्द हिन्दी में भी हैं और त्रीणी, पेई, इक, सकदा, ओह् आदि शब्द काफी समानता रखते हैं।

हिन्दी-हिन्दुई-दक्खिनी

हिन्दी की कड़ी के रूप में उत्तर भारत के जिस बीज का दक्षिण भारत में प्रत्यारोपण किया गया वही कालान्तर में उपयुक्त रूप में विकसित हुई।

मुहम्मद तुगलक ने सन् १३२७ में सामरिक दृष्टि से दौलताबाद को राजधानी बनाया साथ ही दिल्ली के नागरिकों, पदाधिकारियों, सैनिकों और कलाविदों को दिल्ली छोड़कर जाने और वहाँ स्थायी रूप से रहने का आदेश दिया। तुगलक की यह नीति कितनी असफल रही पर सेना, जनता और व्यापारी वर्ग के हजारों परिवारों को पशुओं सहित वहाँ जाना पड़ा। कुछ वर्ष बाद ही जब दौलताबाद से फिर से दिल्ली लौटने का आदेश हुआ तो कुछ परिवार नहीं रह गये। जो लोग वहाँ गये उनमें हिन्दू-मुसलमान दोनों सम्मिलित थे और अधिकतर दिल्ली तथा आसपास के थे। वे लोग मिश्रित भाषा बोलते थे जिस पर पंजाबी, हरियाणवी और ब्रज का विशेष प्रभाव था। उनके साथ जो अधिकारीगण थे उनकी मातृभाषा अरबी-फारसी तथा तुर्की थी। जिन क्षेत्रों[1] में यह भाषा विकसित हुई वहाँ के लोग मराठी, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम बोलते थे। महाराष्ट्र के क्षेत्र में मराठी का प्रभाव हैं और तेलुगु के क्षेत्र में तेलुगु और कन्नड़ के क्षेत्र में कन्नड़ का प्रभाव है।

दक्खिनी मूलतः हिन्दी का ही एक रूप है। इस पर विस्तार से चर्चा हिन्दी तथा उर्दू दोनों ही भाषाओं के विद्वानों ने की हैं जिनमें से क्रमशः डॉ० बाबूराम सक्सेना[2] तथा डॉ० मसूद हुसेन खाँ[3] उल्लेखनीय हैं। कालान्तर में हैदराबाद के डॉ० श्रीराम शर्मा[4], डॉ० राजकिशोर तथा औरंगाबाद के डॉ० भालचन्द्र राव तेलंग[5] ने काम किया। हिन्दी के महापंडित राहुल जी

---

१. प्रो० अब्दुल कादरी सरवरी के अनुसार दक्खिनी का प्रभाव क्षेत्र दक्षिण के लगभग सभी राज्यों—मद्रास (अब तमिलनाडु), केरल, आन्ध्र और महाराष्ट्र में फैला हुआ था। उत्तर में मध्यभारत के स्थान, जैसे सागर, मालवा आदि भी इसके प्रभाव में थे।

२. दक्खिनी हिन्दी—डॉ० बाबूराम सक्सेना (डॉ० सक्सेना ने इसको दक्खिनी हिन्दी कहना उचित समझा।)

३. शेरो जवान तथा प्रितनामा—डॉ० मसूद हुसैन खाँ (मुकद्दमा तारिखे जबान उर्दू), १९५४ ।

४. दक्खिनी का उद्भव और विकास—डॉ० श्रीराम शर्मा, १९६४।
दक्खिनी का पद्य और गद्य—डॉ० श्रीराम शर्मा, १९५७।

५. हिन्दुई बनाम दक्खिनी—डॉ२ भालचन्द्र राव तेलंग, औरंगाबाद, १९७५।

तो 'दक्खिनी हिन्दी काव्यधारा' जैसे विशाल ग्रन्थ ही प्रस्तुत किया जिसमें आदिकाल (आठ), मध्यकाल (चौदह), आधुनिक काल (चौदह) के छत्तीस कवियों को सम्मिलित किया गया है।

प्रारम्भ में उन्होंने स्पष्ट किया है—

> "दक्खिनी हिन्दी साहित्य की एक ऐसी कड़ी है जिसको भुलाया नहीं जा सकता। × × × खड़ी बोली के सर्व प्रथम कवि यह दक्खिनी कवि थे। एक ओर उन्होंने बोलचाल की कौरवी को साहित्यिक भाषा का रूप दिया तो दूसरी तरफ उनकी कृतियों ने उर्दू कविता का प्रारम्भ किया। हमारी हिन्दी-उर्दू की विशेष तौर से गद्य की ऋणी है। दिल्ली के राज्यपालों, सेनापतियों और दूसरे शासकों के साथ कौरवी भारत के भिन्न-भिन्न भागों में पहुँची है, हाँ साधारण बोलचाल के लिए ही राजकीय कार्य या साहित्य के लिए नहीं। × × × दिल्ली के कारण उसका (कौरवी का) भाग्य लौटा। और आज उसकी भाषा समस्त देश का सम्मिलित भाषा बन गई।" (दो शब्द, पृष्ठ ५)

डॉ० मसूद हुसैन खाँ ने स्वीकार किया कि दक्खिनी भाषा की शब्दावली, विशेषताएँ तथा पद-व्याख्या दिल्ली के आस-पास की बोलियों, विशेष रूप से हरियाणी और खड़ी बोली से पूरी तरह मेल खाती है। (शेरो जबान)

बोलचाल की दक्खिनी के अनेक रूप मिलते हैं। आज से एक शताब्दी पूर्व किए गए डॉ० ग्रियर्सन के सर्वेक्षण के अनुसार, इसके बोलने वालों की संख्या ३६५४१७२ बताई गई थी।

दक्खिनी के प्रथम कवि ख्वाजा बन्देनवाज (१३२१-१४५२ ई०) ने तो उसको 'हिन्दुई' की ही संज्ञा दी। इस 'हिन्दुई' को ही व्यापक अर्थ में लिया गया है। यह भी माना गया है कि उसकी प्रत्येक वाणी के लिए कहा गया है—

> हिन्दुई जबान तो जरूर मुल्क के मुख्तलिफ हिस्सों में मुख्तिलिफ है।
>
> —डॉ० वहीद मिर्जा

स्वयं हजरत बन्देनवाज इसे 'हिन्दवी' कहते हैं—

"बाजलुत्फ बातें और मामलते के इशारे हैं जो 'हिन्दवी' के सिवाय किसी जबान में नहीं कहे जा सकते।"

शेख शरफुद्दीन अशरफ साहेब ने भी अपनी किताब 'नौसिहार' में 'हिन्दुई' कहा है ?

वाचा कीन्हा हिन्दुई में। किस्सा कफतल शाहहुसैन ।।
नजम लिखी सब मौजूं आन। यों में हिन्दुई कर आसान ।।

कई शताब्दी बाद 'दक्खिनी' नाम प्रचलित हुआ है जिसका प्रामाणिकता के साथ उल्लेख वजही ने कुतुब मुश्तरी में किया—

दक्खिन में जो मिठी बात का।
अछायें किया कोइ उस घात का।

इसके बाद तो इब्न निशाती ने 'फूलबन' में तथा रुस्तमी ने 'खाबिरनामह' में उसी को 'दखिनी' से अभिहित किया। हजरत निजामुद्दीन औलिया के तीन पद 'रागकल्पद्रुम' में मिलते हैं जिससे इस भाषा के प्रारंभिक स्वरूप पर प्रकाश पड़ता है—

होरी खेलत हौ हौ रे लला
बहियाँ न गहौ बहियाँ
न गहौ जावो चला
काहू को लपट और झपट काहू कैं
पकरत हो जू चगला ।।

ख्वाजा बन्दानवाज की शिष्य परम्परा में बड़े साहब अकबरशाह थे जिनकी कृति 'शृंगार मंजरी' का संपादन डॉ० राघवन ने किया। भूषण के बड़े भाई कवि चिंतामणि ने इस कृति का ब्रजभाषा में रूपान्तर किया और इस कृति को सत्रहवीं शताब्दी की बहुमूल्य रचना के रूप में घोषित किया—

जिनके सुमिरत होति सिद्धि संपति परिपूरन।
कहत बड़े साहिब समग्ग फलदायक तूरन ।।
जाको मनु उनके पदकमल भ्रमरू सुभूपर धन्य नरु।
बन्देनिवाज हजरति जगत सकल भुवनतल कल्पतरु ।।

इस भाषा के उद्गम और विकास में तत्सम, तद्भव और देशी शब्दों का योगदान रहा है जो परम्परागत अधिक है निर्मित बनावटी कम। दखिनी के

साहित्य में प्रयुक्त शब्दावली को अखिल भारतीय आसानी से माना जा सकता है—

> ज्ञान, पात, बांद, खींचाखींच, भक्तबंदा, जना, चौथा, दाना, जामा, खाना, काँसा, दाना, बीना, तरीकत, पैदाइश, इशारत, मिठाई, दवाई, नूरानी, भोगन, बिसरन, जुल्मात, अँधार, रोगी, सूफी, नादान, नामर्द, नाकबूल, बेखुदी, बेहया, बेफायदा, हरतरफ, बिसरन, बिचार, हमदर्द, मुल्की, दरमियानी, जिन्दगी, बंदगी, मर्दानगी, चंदना, एकला, बालपन, खबरदार, कमरबंद, उम्मीदवार, तथा कुछ क्रियार्थ संज्ञा दिपना, जलना, भरना, अछना (रहना होना) करना, देखना, रखना, बोलना, लेना, बरतना, मिलना, हाँडना, (फिरना), भौंदना (चकित होना) आदि।

दकनी में गद्य-पद्य सभी कुछ लिखा गया। डॉ० तैलंग ने बन्देनवाज की हिन्दुई का अभिधान कोश चौसठ पृष्ठों में प्रस्तुत किया है। उसकी भाषा का स्वरूप आज भी मान्य है—

> पानी में नमक डाल लेसां देखना उसे।
> जब घुल गया नमक तो नमक बोलना किसे।
> यूँ घोले खुदी अपनी खुदा साथ मुस्तफा।
> जब घुल गई खुदी तो खुदा बोलना किसे।

कुछ विद्वान् दक्खिनी पर हरियाणी का प्रभाव मानते हैं। वस्तुतः इतनी अधिक भाषाओं का प्रभाव इस पर है और वह भी घुलामिला कि उसको पहचानना मुश्किल है। बुरहानुद्दीन की भाषा पर गुजराती, निशाती की भाषा पर मराठी और इब्राहीम आदिलशाह की भाषा पर ब्रजभाषा का प्रभाव अत्यधिक है।

'नवरस' जैसी कृति भी इसमें है जो ब्रज और संस्कृत बहुल शब्दावली भरपूर है।

पिछले वर्ष त्रिवेन्द्रम में दक्खिनी पर अखिल भारतीय संगोष्ठी सम्पन्न हुई जिसमें उद्घाटन भाषण में श्री के० चन्द्रशेखरन ने कहा कि (दक्षिण के) इन राज्यों की भाषाओं से दक्खिनी हिन्दी को मिलाना ही नहीं, दोनों भाषाओं का परस्पर योगदान भी कराना है। भाषा के विकास के लिए शब्द पर्याप्त हैं।

शब्दों की समृद्धि जितनी हो उतनी ही उत्तमता भाषा में आएगी। × × × × दक्खिनी जैसी उपभाषाओं को अपने राज्यों की अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करना होगा। इन भाषाओं को दक्खिनी से शब्द लेना चाहिए। परस्पर शब्दों का आदान-प्रदान करते हुए हमें भाषा के विकास का प्रयास करना चाहिए। यह संयोग ही है कि चौदहवीं शताब्दी में अमीरखुसरो जैसे सहिष्णु संत जिस भाषा का प्रयोग उत्तर भारत में कर रहे थे किन्हीं कारणों से उत्तर में अधिक विकसित न होकर सुदूर दक्षिण में विकसित हुई और फिर से उत्तर में लौटकर वर्तमान हिन्दी के स्वरूप को स्थिर करने में सहायक सिद्ध हुई।

यह माना जाता है कि दक्खिनी कर्नाटक तथा आंध्र में ही अधिक विकसित हुई पर तमिलनाडु के तंजाऊर नगर में तुराव ने 'मनसमझावन' (हिन्दी संपादक विद्यासागर डॉ० सैयदा जाफर) दक्खिनी में लिखा था। डॉ० परमानन्द पांचाल ने 'दक्खिनी की शब्दावली' पर शोधकार्य सम्पन्न किया है। 'दक्खिनी हिन्दी" हिन्दी का वह पूर्व रूप है जिसका विकास चौदहवीं सदी से अठारहवीं सदी तक बहमनी कुतुबशाही और आदिलशाही आदि राज्यों में हुआ। इसके माध्यम से उत्तर भारत के अनेक शब्द दक्षिण की भाषाओं में और दक्षिणी के भाषाओं के अनेक शब्द उत्तर की भाषाओं में आये हैं।

यह भाषा संस्कृत तथा फारसी से सरल मानी गई—

जिसे फारसी का न कुछ ग्यान है
सो दक्खिनी ज़बाँ उसको आसान है
सो इसमें सहन्सक्रुत का है मुराद
किया इसमें आसानगी का सुवाद।

(सुनअती, १६४५ई०)

बहरी ने घोषणा की—

हिन्दी तो जबाँ च है हमारी।
कहने न लग हमन कूँ भारी।।

(सत्रहवीं शताब्दी)

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि उत्तर तथा दक्षिण भारत में दक्खिनी हिन्दी ने सेतु का कार्य सम्पादित किया है। आज इसके महत्त्व को पुनः प्रतिपादित करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि चालीस वर्ष पूर्व इस अकादमी ने ही डॉ० बाबूराम सक्सेना की कृति 'दक्खिनी हिन्दी' प्रकाशित की थी। बस इस विधा में आगे बढ़कर इसका कोश प्रकाशित होना चाहिए।

हिन्दी तथा द्रविड़ भाषाएँ

भारत में द्रविड़ परिवार बहुत प्राचीन है। ब्राहुई के अतिरिक्त (अब बिलोचिस्तान-पाकिस्तान) भारत के दक्षिण भूभाग में द्रविड़ भाषाएँ बोली जाती हैं ! सुप्रसिद्ध भाषाविद् जे० ब्लाख के अनुसार, द्रविड़ भाषाएँ भारत की कुल जनसंख्या के पांचवें भाग द्वारा बोली जाती हैं। द्रविड़ परिवार का संक्षिप्त परिचय 'भारतीय भाषाएँ' शीर्षक भाग में दिया गया है। पहले इस पूरे परिवार को 'तमिलीअन' अथवा 'तमुलिअन' नाम विदेशियों ने दिया फिर बाद में कॉलवेल द्वारा दिया गया नाम 'द्रविडिअन' ले लिया गया। वस्तुतः यह वही प्राचीन नाम है जो संस्कृत में 'द्रामिड़' अथवा 'द्रविड़' नाम से जाना जाता था। सन् १८५६ में कॉडवेल ने द्रविड़ भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण प्रस्तुत किया। द्रविड़ तथा आर्यभाषाओं के पारस्परिक सम्बन्ध पर पृथक् से चर्चा की गई है। तुलनात्मक अध्ययन की दिशा में कॉडवेल अग्रदूत थे। किटेल ने 'कन्नड कोश' में जो सामग्री दी है वह विलक्षण है जिसके सम्बन्ध में कॉडवेल ने लिखा था कि " मद्रास विश्वविद्यालय कोश किटेल की तुलना में प्रगति से बहुत दूर है।" उनकी दृष्टि में किटेल के कोश में भी संशोधन अपेक्षित था पर एक शताब्दी बाद इस कोश का पुनर्मुद्रण संभव हो सका और वह भी मद्रास विश्वविद्यालय द्वारा। ब्लाख कृत 'द्रविड भाषाओं की व्याकरणिक संरचना' (हिन्दी अनुवाद) शीर्षक ग्रन्थ उल्लेखनीय है जो राजस्थान ग्रन्थ अकादमी से अब प्रकाशित है।

उत्तर भारत की प्रमुख भाषा संस्कृत का प्रभाव तो द्रविड़ भाषाओं पर पड़ा ही, पर द्रविड़ भाषाओं का प्रभाव भी संस्कृत पर कम नहीं पड़ा। साधारणतः एक भाषा का प्रभाव उसकी छवि, रूप और शब्द समूह पर देखा जा सकता है। माना जाता है कि उत्तर भारत की भाषाओं में मूर्द्धन्य ध्वनियों का विकास द्रविड़ भाषाओं के कारण हुआ।

श्री ए० सी० कामाक्षीराव ने द्रविड़ भाषाओं के व्यापक प्रभाव की चर्चा की है—

१. संस्कृत की कारक रचना संयोगात्मक थी। हिन्दी की कारक रचना वियोगात्मक है। संज्ञा या सर्वनाम के विकृत रूप के आगे कारक चिह्न जोड़कर कारक रूप बनाने की रीति द्रविड़ भाषाओं में पहले से थी।

२. विशेषणों में तारतम्य को व्यक्त करने के लिए संस्कृत विशेषणों के अलग-अलग रूप थे--श्रेष्ठ, श्रेष्ठतर, श्रेष्ठतम लेकिन हिन्दी में 'से' और 'सबसे' का प्रयोग करके ही यह तुलना होती है। यह द्रविड़ भाषाओं का प्रभाव है।

इसी प्रकार कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण प्रभाव हैं—हिन्दी में सहायक क्रिया का प्रयोग, पूर्वकालिक कृदन्तों की रचना, भूतकालिक रूप के साथ 'जा' सहायक क्रिया जोड़कर कर्मवाच्य बनाना, उत्तम पुरुष सर्वनाम के दो रूप – श्रोता-सहित व श्रोता-रहित, अनुकरणवाचक शब्दावली तथा सादृश्य या सम्बन्ध का बोध करने के लिए शब्दों की आंशिक आवृत्ति (चाय-वाय) जैसी प्रवृत्तियों को द्रविड़ भाषाओं की देन स्वीकार किया गया है।

द्रविड़ भाषाओं से बहुत कुछ लिया गया है। संस्कृत भाषा तक ने बड़ी मात्रा में शब्दावली गृहीत की है। प्रो० टी० बरो ने अपने ग्रन्थ 'संस्कृत' में एक पृथक् अध्याय ही द्रविड़ भाषाओं की देन पर दे दिया है। संस्कृत के बाद यह शब्दावली आज तक विभिन्न भाषाओं में इस प्रकार रचपच गई है कि आसानी से पता नहीं चलता कि ये शब्द द्रविड़ भाषाओं से गृहीत किये गये हैं। यह भी माना जाता है कि प्राकृत भाषाओं का जन्म ही अनार्यों के संसर्ग से हुआ। वैयाकरणों ने ऐसे शब्दों की सूची बनाकर उन्हें देशी कह दिया। डॉ० भंडारकर ने देशी शब्दों के मूल की ओर संकेत करते हुए कहा—

> "Desyas are such as cannot be derived from Sanskrit and must be referred. to another Source."

यही बात डॉ० ए० एन० उपाध्ये ने कही कि—

> "Some oppear to have been borrowed. from the Dravidian languages."

किट्टल के कन्नड कोश की चर्चा की जा चुकी है। उन्होंने अपने कोश में ऐसे चार सौ शब्दों की सूची दी है जो संस्कृत के माने जाते हैं किन्तु द्रविड़ हैं। हिन्दी में द्रविड भाषाओं की कितनी शब्दावली है इसकी ओर मैसूर विश्वविद्यालम के प्रोफेसर डॉ० एम० एस० कृष्णमूर्ति ने ध्यान दिलाया और सूचीबद्ध किया। यह विस्तृत शोध निबन्ध 'हिन्दी में द्राविड़ शब्द' शीर्षक से

भारतीय हिन्दी परिषद् के मुखपत्र अनुशीलन (वर्ष २१, अंक ३-४) में प्रकाशित हुआ। उनके अनुसार हिन्दी में आर-पार, आला, रार, उडद, ओप, होड, काट, कत्ति, गमकना, कल, घूँट, गुबार, कोटर, गोट, तोतली, चिटपुट, चिढ़ना, झड़ी, झाड़, घानी, टट्टी, घुँघराले आदि एक सौ पाँच शब्दों की लम्बी सूची है। समान तत्त्व की दिशा में निस्सन्देह यह अध्ययन काफी उपयोगी है। इस दिशा में मद्रास विश्वविद्यालय, मद्रास के प्रोफेसर डॉ० एस० एन० गणेशन ने शोध कार्य तमिल के विशेष सन्दर्भ में किया है।

यहीं एक अतिवाद के उदाहरण के रूप में विद्वान् श्री काशीराम शर्मा कृत **द्रविड़ परिवार की भाषा 'हिन्दी'** (सन् १९६८) का उल्लेख करना चाहता हूँ। लगभग दो सौ पृष्ठों में लिखी इस पुस्तक की सामग्री एक छोर है तो दूसरा छोर उन व्यक्तियों से सम्बन्धित है जो 'हिन्दी दक्षिण भारत के लिए उतनी ही विदेशी है जितनी अंग्रेजी' विचारधारा के प्रबल पक्षधर हैं। वस्तुतः इन दो छोरों के बीच ही मध्यम मार्ग है जो यथार्थ भी है और सत्य भी।

हिन्दी-तमिल

प्रचलित भारतीय भाषाओं में तमिल ही काफी प्राचीन भाषा है। यही एकमात्र ऐसी भाषा है जो संस्कृत के सहारे के बिना हर प्रकार के विचारों को अभिव्यक्त करने में समर्थ है। इसका तात्पर्य यह नहीं कि तमिल पर संस्कृत का प्रभाव नहीं पड़ा। यह प्राचीनतम भाषा अपने रूप को सहस्रों वर्षों से सुरक्षित रखे हुए है।

हिन्दी-तमिल की ध्वनि व्यवस्था में पर्याप्त भिन्नता है अतएव ध्वनि सम्बन्धी कठिनाई होती है। कला और साहित्य की दीर्घ परम्परा का निर्वाह तमिल कर रही है। तमिल ने संस्कृत से पर्याप्त लिया है और हिन्दी भी तमिल से मछलियों तथा नारियल सम्बन्धी शब्दावली ले सकती है।

समान शब्दावली की दिशा में शिक्षा मंत्रालय, नई दिल्ली तथा केन्द्रीय भारतीय भाषा संस्थान, मैसूर की सूचियों के अतिरिक्त दो महत्त्वपूर्ण शोध कार्य सम्पन्न हुए हैं।

'हिन्दी-तमिल की समान शब्दावली'

—डॉ० सुरेन्द्र कुलश्रेष्ठ, आगरा, १९६६।

'हिन्दी-तमिल की समान स्रोतीय भिन्नार्थी शब्दावली'
—डॉ० वी० रा० जगन्नाथ केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा १९६९।

डॉ० जगन्नाथन के शोध प्रबन्ध की लम्बी भूमिका बत्तीस पृष्ठों में है। अर्थ भिन्नता के विभिन्न पहलुओं पर रेखा चित्र भी प्रस्तुत किये गये हैं—

(पृ० २५ से उद्धृत)
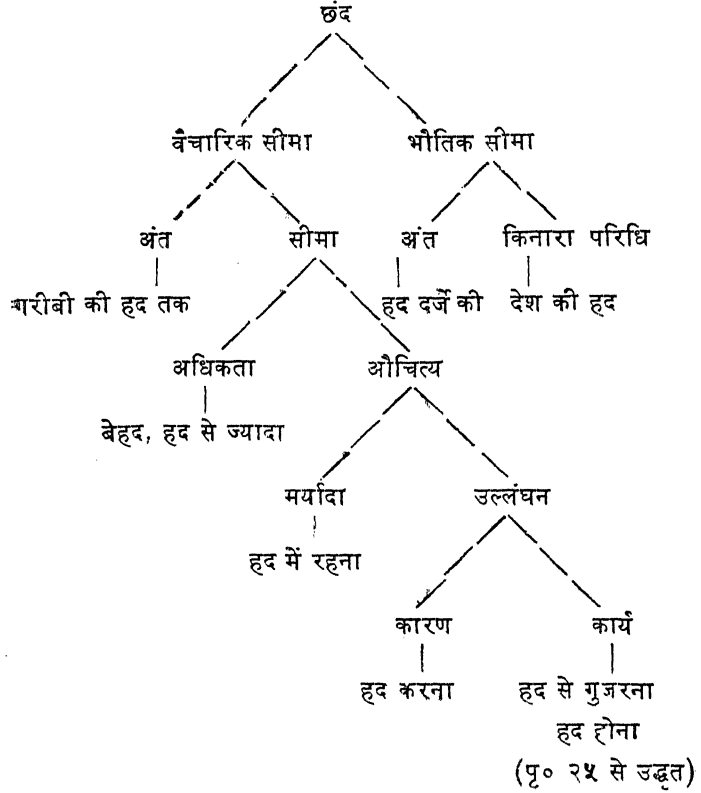
'देश की हद' के अर्थ में 'सरहद' प्रचलन में है।

तमिल में हिन्दी-अरबी फ़ारसी के शब्द पर्याप्त मात्रा में हैं—

कुषालक (खुशहाल), षोक्काक (शोख), परवा (परवाहा), शोदा (शोहदा), दावो (दावा), राजीनामा, महसूल जरूराक (जरूर)।

उस्ताद, कसरत, बेईमान, कुश्ती, बेश, बल्ले, शर्त, रद्द, रसीद, गोलमाल, जगह, होशियार, फरियाद, कचहरी, पुकार, अमीन, सामान, जब्त, तहसील-

दार आदि शब्द तो अखिल भारतीय होने के कारण तमिल में भी हैं। तमिल भाषा-भाषी जब हिन्दी में लिखेगा तो इन शब्दों का प्रयोग करेगा ही पर तमिल में भी करेगा।

तमिलनाडु में सौराष्ट्री भाषा का रूप भी मिलता है। सौराष्ट्री के माध्यम से मराठी-गुजराती तथा हिन्दी भाषा की शब्दावली तमिलनाडु में घुल-मिल गई। संस्कृत की शब्दावली तो पहले थी ही, जैसे बोण्डि, लोनि (नवनीत), नेयन्दु (ननद), नतिनि (नातनी), वेनि (वेणी)। हिन्दी के कान, केला, गाय, फूल, मौसी, भीतर, पानी, बेटी, भात, मराठी के झाड (पेड़), काल (कल), गुजराती के वत्तो (बात), जेम (खाना), माय (माँ), दुपार (दुपहर), बाप आदि शब्दावली घुल-मिल गई। महाराष्ट्र के शासकों का तंजौर में जो कुछ काल का शासन रहा उसका ही यह सुपरिणाम हुआ।

हिन्दी तक ही तमिल की शब्दावली नहीं वरन् हिन्दी की उपभाषाओं में भी उसकी पैठ है। उत्तर की मध्य पहाड़ी की कुमाउँनी भाषा में इस प्रकार की शब्दावली की ओर महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने संकेत भी किया था। श्री सुरेश पन्त ने इस दिशा में विशेष शोध कर 'भाषा' में अपनी सामग्री प्रकाशित करायी। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

कुमाउँनी	तमिल
ओड़ो (दो खेतों के बीच विभाजक)	उड़े
उमि (गेहूँ आदि की भुनी बालें)	उमि
तीर (खेतों का बाहरी भाग)	तीरम्
नल (अन्न की बालें काटने के वाद बचा भाग)	नेल्
पुल (घास का बंधा गट्ठरे)	पुल
ऊर (स्थान वाचक)	ऊर
ओट्को (ओर)	ओटुक्कु
कोख (बगल)	कोखु
पैड़ि/पौड़ि (सीढ़ी)	पड़ि
तलों (सिर)	तलै
सिरि (कान्ति)	सीरम्
कोठार (आनाज रखने का भंडार)	कोट्टारम्

कुमाउँनी में प्राप्त अनेक शब्द आज हिन्दी में भी प्रयोग में आते हैं। इस दिशा में जो शोध कार्य हुए हैं, उनमें डॉ० जगन्नाथन का कार्य विशेष उल्लेखनीय है। डॉ० जगन्नाथ की सूची में लगभग एक हजार शब्द हैं। सर्वाधिक सीमित संख्या में समान शब्दावली तमिल में है। यह संख्या अधिकतम दो हजार हो सकती है।

हिन्दी-तेलुगु

हिन्दी-तेलुगु का सम्बन्ध सदियों से घनिष्ठ है और दखिनी हिन्दी के माध्यम से अत्यधिक निकट हो गया है। दक्षिण की चार प्रमुख भाषाओं में से तेलुगु सबसे विशाल भू-भाग में बोली जाती है। तेलुगु ही ऐसी भाषा है जिसके साथ तुलनात्मक दृष्टि से सर्वाधिक कार्य हुआ है।

शिक्षा मंत्रालय, नई दिल्ली तथा केन्द्रीय भारतीय भाषा संस्थान, मैसूर द्वारा प्रकाशित समान शब्द सूचियों के अतिरिक्त डॉ० (श्रीमती) ई० कामेश्वरी का शोध प्रबन्ध 'अर्थ विज्ञान की दृष्टि से हिन्दी एवं तेलुगु शब्दों का अध्याय', १९८६ ई० महत्त्वपूर्ण है। विश्लेषणात्मक अध्ययन के अतिरिक्त पंचम अध्याय में समानरूपी शब्दों की सूचियाँ भी दी गई हैं। हिन्दी-तेलुगु की समान शब्दावली पर केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा में रीडर डॉ० सीताराम शास्त्री ने भी कार्य किया है।

उदाहरणार्थ यहाँ संक्षिप्त सूची दी जा रही है—

हिन्दी	तेलुगु	हिन्दी	तेलुगु
पद्य	पद्यम्	वृक्ष	वृक्षम्
मुकुट	मुकुटमु	भर्ता	भर्ता
क्षेम	क्षेममु	भार्या	भार्या
अस्पताल	आस्पत्रि	मनुष्य	मनिषि
अलमारी	अलमर	आकर्षण	आकर्षम्
राज्य	राज्यमु	दृश्य	दृश्यमु
अन्न	अन्नमु	गौरव	गौरवमु
नीर	नीरू	प्रवेश	प्रवेशमु
सागर	सागरमु	नायक	नायकुडु

हिन्दी	तेलगु	हिन्दी	तेलगु
रात	रात्रि	जवाब	जवाजुलु
		प्रशंसा	प्रशंसा
सायंकाल	सायंकालमु	प्रश्न	प्रश्नुलु
गायक	गाययकुडु	वस्त्र	वस्त्रासु
नट	नटुडु	अवसर	अवसरम्
आसरा	आसरा	मत	मतालु
आरती	आरती	आराधना	आराधनलु
आंगन	अंकणमु	देवता	देवतलु
कचहरी	कच्चेरी	आभूषण	आभूषणमुलु
कुली	कुलि	चोंगा	चौक्का
कच्चा	कच्चा	ज्वर	ज्वरमु
कटारी	कटारु	झंडा	जंडा
हत्यारा	हंतकुडु	धरती	धरती
सांकेतिक	सांकेतिकम्		
		चप्पल	चेप्पुलु

तेलगु-हिन्दी की समान कहावतों पर भी शोधकार्य किया जा चुका है। दोनों भाषाओं की व्याकरणिक संरचना पर सर्वाधिक शोध हुआ है।

हिन्दी-मलयाळम

हिन्दी मध्य देश की भाषा है जिसको आज केन्द्रीय सरकार का राजकाज चलाने के लिए 'राजभाषा' का पद प्राप्त है और साथ ही उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश, राजस्थान, दिल्ली, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश सहित सात राज्यों की राजभाषा है। मलयाळम द्रविड़ परिवार की भाषा है जो केरल राज्य की राजभाषा है। स्थान की इतनी अधिक दूरी तथा दो भिन्न परिवारों की भाषाएँ होते हुए भी दोनों भाषाओं की शब्दावली में काफी समानता है। शब्दावली में ही नहीं दोनों भाषाओं की ध्वनि व्यवस्था में भी पर्याप्त समानता है क्योंकि मूल द्रविड़ से विकसित होते हुए भी मलयाळम की ध्वनि व्यवस्था पर संस्कृत का पर्याप्त प्रभाव है।

'हिन्दी-मलयाळम' की समान सूची शिक्षा मंत्रालय द्वारा बहुत पहले प्रकाशित हुई जिसका आधार मात्र शब्दकोश थे। कालान्तर में मलयाळम भाषा के साहित्य में प्रयुक्त शब्दावली के आधार पर समान शब्दावली पर

काम करने के लिए डॉ० वेल्लियाणि अर्जुनन को प्रेरित किया। डॉ० अर्जुनन ने लगभग दस सहस्र शब्दों की खोज की। यह शोध प्रबन्ध अभी अप्रकाशित है। हिन्दी में द्रविड़ शब्दावली पर डॉ० अर्जुनन[1] को डी० लिट्० की उपाधि प्राप्त हुई। इस दिशा में सुश्री बी० येम० मेरी ने भी कार्य किया जो गवेषणा के मार्च-सितम्बर १९६४ के अंक में प्रकाशित है। इस प्रकार की सूची श्रीमती श्यामला कुमारी ने तैयार की जिसका प्रकाशन भाषा संस्थान, मैसूर ने किया। यह भी सूची पुरानी सूचियों पर आधारित है। कोई नई शोध नहीं। इसमें कुछ सहस्र शब्द हैं।

इस बीच सुश्री एम० ईश्वरी ने भी इस दिशा में शोध किया जो अब "A comparative study of the vocabulary of Hindi and Malayalam" (१९७३) शीर्षक से कोचीन विश्वविद्यालय, कोचीन से प्रकाशित है।

दोनों भाषाओं की शब्दावली की तुलना इस प्रकार है --

भाषा	तत्सम	तद्भव	विदेशी	देशी
हिन्दी	२०%	७०%	९%	१%
मलयालम	५८%	३६%	६%	—

एक दृष्टि में ही हम कह सकते हैं कि संस्कृत तत्सम शब्दावली का प्रतिशत हिन्दी से मलयाळम में कहीं अधिक है। ऐसी स्थिति में यदि मलयाळम भाषा-भाषी के लिये हिन्दी की पाठ्य पुस्तक तैयार की जायें तो उसमें संस्कृत की समान शब्दावली का अधिकाधिक प्रयोग किया जाना चाहिए। जो शब्दावली हम सर्वप्रथम किसी अन्य भाषा-भाषी को देना चाहते हैं, सिखाना चाहते हैं, वह सीमित होनी चाहिए। पर यह संख्या कितनी सीमित रहे और इसका आधार क्या हो? इधर जो शब्द-सूचियाँ प्रकाशित हुई हैं उनमें निम्नतम संख्या ५०० है और अधिकतर ५००० है। लेखक ने

---

१. हिन्दी और मलयाळम की समान शब्दावली—पी-एच० डी० शोध प्रबन्ध, अलीगढ़, १९६६। हिन्दी में प्रयुक्त दक्षिण भारतीय भाषाओं के शब्द—डी० लिट्० शोध प्रबन्ध, जबलपुर, १९७०।

स्वयं इस प्रकार की शब्दावली[1] निश्चित की है जिसकी संख्या २००० है और यह शब्दावली आवृत्ति पर आधारित है। यह शब्दावली ही आधारभूत शब्दावली कही जा सकती है। पुरानी पाठशाला[2] तथा कोश में प्राप्त शब्द हिन्दी के देशव्यापी स्वरूप को समझने में सहायक हैं। राष्ट्रव्यापी लोकप्रिय इन शब्दों की जानकारी अत्यन्त आवश्यक है।

दो भाषाओं की आधारभूत शब्दावली का व्यतिरेकी अध्ययन भी आवश्यक है। मेरी राय में मात्र समानता से कहीं अधिक यह पक्ष महत्त्वपूर्ण है। दोनों भाषाओं में सहस्रों शब्द समान होते हुए भी हो सकता है। प्रयोगावृत्ति के आधार पर दोनों भाषाओं की आधारभूत शब्दावली में सम्मिलित न हो सकें। यह कार्य तब तक सम्भव नहीं जब तक कि प्रत्येक भारतीय भाषा का प्रयोग आवृत्ति पर आधारित शब्दावलियाँ उपलब्ध न हों। संयोग से इस दिशा में मलयालम भाषा अग्रणी है। श्री विजयनाथन पिल्लै दारा तैयार की गई चार हजार शब्दों की यह सूची भाषा संस्थान त्रिवेन्द्रम से प्रकाशित है।

आवृत्ति के आधार पर तैयार की गई उच्चतम से निम्नतम प्रयोगावृत्ति की इस सूची में एक हजार ऐसे शब्द हैं जो संस्कृत, फारसी, अंग्रेजी के विभिन्न स्रोतों से आये हैं और समान हैं। प्रथम पचास शब्दों में तीन शब्द समान हैं—नोट, मात्र, जीवित। कथा, कार्य, काल, मनुष्य, प्रवर्तन, शक्ति, जन, चन्द्र, मन, बंधन, साहित्य, पत्र, अवश्य, यन्त्र, शब्द, दिवस प्रत्येक आदि अन्य शब्द हैं।

समान शब्दों का रूप मलयाळम की प्रवृत्ति के अनुसार परिवर्तित हो गया है। जैसे—

१. संज्ञाओं में नपुंसक लिंग के शब्दों के अन्त में अम्-अक्षरम्।

२. पुंलिंग संज्ञाओं के अन्त में–अन्–अनंगन्।

---

१. हिन्दी की बेसिक शब्दावली—डॉ० कैलाश चन्द्र भाटिया, अलीगढ़, मु० विश्वविद्यालय, अलीगढ़, १९६८।

२. केरलियों की हिन्दी देन—डॉ० जी० गोपीनाथन (पी०-एच० डी० शोध प्रबन्ध) अध्याय २—पुराने कोश और पाठशालाएँ सन् १९७३।

३. दीर्घ स्वरान्त से ह्रस्व स्वारान्त, आ - अ - अज्ञानत ई - इ - वानि।
ऊ - उ - लट्टु

४. अरबी-फारसी के शब्दों में अवृत्ताकार 'उ' - असलु

५. आकारान्त/नकारान्त आदि के अन्त में - आवु - नेतावु - खजनावु।

पूरी शब्द सूची यहाँ प्रस्तुत की जा रही है—

(अधिकतम आवृत्ति से निम्नतम आवृत्ति की ओर)

हिन्दी रूप	मलयालम रूप	हिन्दी रूप	मलयालम रूप
कथा	कथ	राज्य	राज्यम्
कार्य	कार्यम्	विधि	विधि
काल	कालम्	अल्प	अल्पम्
मनुष्य	मनुष्यन्	पढ़ना	पठिक्कु
शक्ति	शक्ति	सृष्टि	सृष्टि
जन	जनम्	उपयोग	उपयोगम्
चाँद	चन्द्रन	समय	समयम्
बन्ध	बन्धम्	श्री	श्री
बन्धु	बन्धु	हृदय	हृदयम्
अवश्य	आवश्यम्	पेटी	पेट्टि
यन्त्र	यन्त्रम्	कवि	कवि
दिवस	दिवसम्	रूप	रूपम्
प्रत्येक	प्रत्येकम्	चलन	चलनम्
कारण	कारणम्	तत्व	तत्वम्
लोक	लोकम्	व्यक्ति	व्यक्ति
अनुभव	अनुभवम्	आत्मा	आत्मावु
शास्त्र	शास्त्रम्	संघ	संघम्
संभव	संभवम्	साधारण	साधारणम्
संभोग	संभोगम्	स्फुरण	स्फुरणम्
योनि	योनि	विचार	विचारम्
विश्वास	विश्वासम्	आधुनिक	आधुनिकम्
मुख	मुखम्	देव	देवन्
यात्रा	यात्र	अधिकार	अधिकारम्

हिन्दी रूप	मलयालम रूप	हिन्दी रूप	मलयालम रूप
भाव	भावम्	अति	अति
भावना	भावन	अभिप्राय	अभिप्रायम्
पावन	पावनम्	रस	रसम्
रात्रि	रात्रि	अर्थ	अर्थम्
स्थल	स्थलम्	क्रम	क्रमम्
वस्तु	वस्तु	प्रकाश	प्रकाशम्
विभक्ति	विभक्ति	प्रेम	प्रेमम्
सुख	सुखम्	अद्भुत	अद्भुतम्
शरीर	शरीरम्	पराजय	पराजयम्
फल	फलम्	बोध	बोधम्
आरम्भ	आरम्भम्	विविध	विविध
बुद्धि	बुद्धि	स्त्री	स्त्री
मास	मासम्	आकाश	आकाशम्
प्रत्यक्ष	प्रत्यक्षम्	खत	कत्तु
नगर	नगरम्	प्रस्तावना	प्रस्तावन
स्थान	स्थानम्	अध्याय	अध्यायम्
प्रतीक्षा	प्रतीक्ष	ग्रह	ग्रहम्
राष्ट्रीय	राष्ट्रीयम्	नदी	नदि
अथवा	अथव	निमिष	निमिषम्
आसूत्रण्	आसूत्रणम्	प्रकृति	प्रकृति
अनेक	अनेकम्	मूल	मूलम्
केन्द्र	केन्द्रम्	लिपि	लिपि
गति	गति	समुदाय	समुदायम्
देश	देशम्	सामान्य	सामान्यम्
नासिका	नासिक	निश्चय	निश्चयम्
सहाय	सहायम्	उदाहरण	उदाहरणम्
परिपाटी	परिपाटि	सूक्ष्म	सूक्ष्मम्
पात्र	पात्रम्	आकृति	आकृति
परिचय	परिचयम्	कृषि	कृषि
साधन	साधनम्	पंडित	पंडितन्

हिन्दी रूप	मलयालम रूप	हिन्दी रूप	मलयालम रूप
सामान	सामानम्	रक्षा	रक्ष
संस्कार	संस्कारम्	मण्डल	मण्डलम्
सत्य	सत्यम्	प्रपंच	प्रपंचम्
मानसिक	मानसिकम्	यथार्थ	यथार्थम्
महा	महा	राजा	राजावु
प्रक्षेपण	प्रक्षपणम्	लक्ष्य	लक्ष्यम्
कुटुम्ब	कुटुम्बम्	अंग	अंगम्
भद्रता	भद्रत	उत्पन्न	उत्पन्नम्
स्वर	स्वरम्	काव्य	काव्यम्
प्राचीन	प्राचीनम्	तीर	तीरम्
बाकी	बाक्कि	धन	धनम्
प्रशस्ति	प्रशस्ति	निरीक्षण	निरीक्षणम्
मासिक	मासिका	पश्चिम	पश्चिमम्
विद्यार्थी	विद्यार्थि	प्रदर्शन	प्रदर्शनम्
व्यवस्था	व्यवस्थ	भगवान्	भगवान्
धैर्य	धैर्यम्	मध्य	मध्यम्
ग्राम (गाँव)	ग्रामम्	युवक	युवावु
शत्रु	शत्रु	रक्त	रक्तम्
जीवन	जीवन्	रेखा	रेख
प्रार्थना	प्रार्थना	लेखक	लेखकन्
बोध्य	बोध्यम्	व्यक्तित्व	व्यक्तित्वम्
आराधना	आराधन	शोभा	शोभ
उद्धरण	उद्धारणम्	गवेषणा	गवेषणम्
पाठ	पाठम्	तमाशा	तमाश
प्रतिभा	प्रतिभ	नाटक	नाटकम्
प्रीति	प्रीति	नियंत्रण	नियंत्रणम्
युद्ध	युद्धम्	परिस्थिति	परिस्थिति
अक्षर	अक्षरम्	पाश्चात्य	पाश्चात्यम्
रोगी	रोगि	प्रसिद्ध	प्रसिद्धम्
शाखा	शाख	प्रसव	प्रसवम्

हिन्दी रूप	मलयालम रूप	हिन्दी रूप	मलयालम रूप
दूर	दूरम्	प्रयोग	प्रयोगम्
विज्ञान	विज्ञानम्	भयंकर	भयंकरम्
सम्मेलन	सम्मेलनम्	भिन्न	भिन्नम्
संपत्ति	संपत्तु	भेद	भेदम्
चर्चा	चर्च्चे	सविशेषता	सविशेषत
सेवा	सेव	सन्तुष्ट	सन्तुष्टम्
नेता	नेतावु	बहु	बहु
गुण	गुणम्	अन्य	अन्यम्
अंधता	अंधता	परिधि	परिधि
आश्रय	आश्रयम्	परम	परमम्
अर्हता	अर्हत	परिशुद्धि	परिशुद्धि
आश्रम	आश्रमम्	पाप	पापम्
इच्छा	इच्छ	पुराण	पुराणम्
ईश्वर	ईश्वरन्	प्रिय	प्रियम्
उपदेश	उपदेशम्	माता	मातावु
कलासृष्टि	कलासृष्टि	रत्न	रत्नम्
कम्बल	कम्बलम्	व्यापार	व्यापारम्
कठिन	कठिनम्	शून्य	शून्यम्
दर्शन	दर्शनम्	क्षमा	क्षम
पर्वत	पर्वतम्	सदा	सदा
मुद्रा	मुद्र	सहृदय	सहृदयन्
मेज़	मेश	समुद्र	समुद्रम्
युग	युगम्	संगीत	संगीतम्
विद्या	विद्य	केवल	केवलम्
योग	योगम्	कोटि	कोटि
वेदना	वेदन	दाढ़ी	ताटि
व्यापक	व्यापकम्	दया	दय
शिला	शिल	निराशा	निराश
संपन्न	सम्पन्नम्	नग्न	नग्नम्
रानी	राणि	ललित	ललितम्

हिन्दी रूप	मलयालम रूप	हिन्दी रूप	मलयालम रूप
पुरुष	पुरुषन्	अव्यक्त	अव्यक्तम्
बीड़ी	बीडि	अप्रत्यक्ष	अप्रत्यक्षम्
विशाल	विशालम्	अतिथि	अतिथि
संख्या	संख्य	अध्यक्ष	अध्यक्षन्
निर्देश	निर्देशम्	अनुग्रह	अनुग्रहम्
बाह्य	बाह्यम्	अपूर्व	अपूर्वम्
विधेय	विधेयम्	अभिमान	अभिमानम्
तैयार	तय्यार	आचार्य	आचार्यन्
मौलिक	मौलिकम्	आक्षेप	आक्षेपम्
आकार	आकारम्	अवहेलना	अवहेलनम्
आशा	आश	अवलम्ब	अबलम्बम्
कलाल	कलालयम्	असामान्य	असामान्यम्
कुमारी	कुमारि	अशक्ति	अशक्ति
चिह्न	चिह्नम्	आधार	आधारम्
चेतना	चेतन	आपत्ति	आपत्त
नाम	नामम्	आदर्श	आदर्शम्
नाना	नाना	आर्य	आर्यन्
निश्चय	निश्चयम्	इत्यादि	इत्यादि
नीति	नीति	इतिहास	इतिहासम्
मधुर	मधुरम्	उचित	उचितम्
मनोहर	मनोहरम्	उत्साह	उत्साहम्
मांस	मांसम्	उद्भव	उद्भवम्
युवा	युवावु	उत्तम	उत्तमम्
यथासमय	यथासमयम्	उपजीवन	उपजीवनम्
रति	रति	उल्लास	उल्लासम्
रचना	रचन	एकड़	एक्कर
राजकीय	राजकीयम्	गान	गानम्
वात्सल्य	वात्सल्यम्	चुम्बन	चुम्बनम्
विचित्र	विचित्रम्	जड़	जड़म्
विप्लव	विप्लवम्	तुलसी	तुलसि

हिन्दी रूप	मलयालम रूप	हिन्दी रूप	मलयालम रूप
वीथि	वीथि	ध्वनि	ध्वनि
स्वदेश	स्वदेशम्	दुर्बल	दुर्बलम्
जन्म	जन्मम्	दृश्य	दृश्यम्
प्रक्रिया	प्रक्रिय	निश्चित	निश्चितम्
उपकार	उपकारम्	निन्दा	निन्द
उपहार	उपहारम्	निस्व	निस्वन्
पुस्तक	पुस्तकम्	निदान	निदानम्
अनुभूति	अनुभूति	पक्षी	पक्षि
अमूल्य	अमूल्यम्	पथ	पथम्
अलंकार	अलंकारम्	परिपूर्ण	परिपूर्णम्
पद्य	पद्यम्	विनोद	विनोदम्
पैतृक	पैतृकम्	विभिन्न	विभिन्नम्
प्रसाद	प्रसादम्	विस्मय	विस्मयम्
प्रगल्भ	प्रगल्भन्	विवेक	विवेकम्
प्रतिपादन	प्रतिपादनम्	विपत्ति	विपत्तु
प्रतीति	प्रतीति	वैरूप्य	वैरूप्यम्
प्रतीक	प्रतीकम्	वैमानिक	वैमानिकम्
प्रतिभास	प्रतिभासम्	व्याप्ति	व्याप्ति
प्रबन्ध	प्रबन्धम्	व्याप्त	व्याप्तम्
प्रमुख	प्रमुखम्	व्यवस्थित	व्यवस्थिति
भक्ति	भक्ति	श्रवण	श्रवणम्
भाषण	भाषणम्	सर्व	सर्वम्
भीक (र)	भीकरम्	समान	समानम्
ममता	ममत	सन्देश	सन्देशम्
महात्मा	महात्मावु	संगम	संगमम्
मातृभूमि	मातृभूमि	समिति	समिति
भूमि	भूमि	स्वर्ग	स्वर्गम्
माधुर्य	माधुर्यम्	हत्या	हत्य
मिथुन	मिथनम्	हेतु	हेतु
मूर्ति	मूर्ति	हिन्दू	हिन्दु

हिन्दी रूप	मलयालम रूप	हिन्दी रूप	मलयालम रूप
मेखला	मेखल	पुत्र	पुत्रन्
मैत्री	मत्रि	विराम	विरामम्
मृत	मृतम्	लय	लयम्
राशि	राशि	वेदी	वेदि
रुचि	रुचि	सजीव	सजीवम्
लघु	लघु	सुगम	सुगमम्
लता	लत	सभा	सभ
लाठी	लात्ति	प्रसन्नता	प्रसन्नत
बरामदा	वरान्ता	अधर्म	अधर्मम्
अलमारा	अलमार	अतुल्य	अतुल्यम्
विद्यालय	विद्यालयम्	अन्याय	अन्यायम्
अनुबन्ध	अनुबन्धम्	मुख्यमंत्री	मुख्यमंत्रि
अनुमान	अनुमानम्	रमणीय	रमणीयम्
अनावश्य (क)	अनावश्यम्	रूपक	रूपकम्
अरोचक	अरोचकम्	लैंगिक	लैंगिकम्
अलौकिक	अलौकिकम्	वसूल	वसूल
अवधूत	अवधूतन्	विलम्ब	विलम्बम्
अश्लील	अश्लीलम्	अपूर्ण	अपूर्णम्
उन्नत	उन्नतम्	आयु	आयुस्सु
उपाय	उपायम्	नेत्र	नेत्रम्
कर्त्तव्य	कर्त्तव्यम्	ग्रन्थ	ग्रन्थम्
कुशल	कुशलम्	चिकित्सा	चिकित्स
कोमल	कोमलम्	यौवन	यौवनम्
क्रीड़ा	क्रीड	युक्ति	युक्ति
गद्य	गद्यम्	समाधि	समाधि
चंचल	चंचलम्	युवती	युवति
धान्य	धान्यम्	मामा	मामन्
ध्रुव	ध्रुवम्	लाभ	लाभम्
नमस्ते	नमस्ते	नष्ट	नष्टम्
नायिका	नायिक	स्वातन्त्र्य	स्वातन्त्र्यम्

हिन्दी रूप	मलयालम रूप	हिन्दी रूप	मलयालम रूप
निर्दय	निर्दयम्	नायक	नायकन्
नूतन	नूतनम्	क्षण	क्षणम्
पत्रिका	पत्रिक		अंग्रेजी शब्दावली
पंक्ति	पंक्ति	नोट	नोट
पंचायत	पंचायत्तु	नोवल	नोवल
पुण्य	पुण्यम्	पार्टी	पार्टी
प्रचार	प्रचारम्	इलेक्ट्रोन	इलेक्ट्रोण
प्रबल	प्रबलम्	कांग्रेस	कांग्रेस
प्रशंसा	प्रशंस	पुलिस	पोलीस्
माध्यम	माध्यमम्	डाक्टर	डाक्टर
मानव	मानवन्	आफ़िस	ओफ़ीस
मुक्ति	मुक्ति	मार्केट	मार्क्कट्ट
मार्क्सिस्ट	मार्क्सिस्ट	स्पेस	स्पेस
स्टेशन	स्टेषन्	सिगरेट	सिगरट
कार	कार	यूनियन	यूणियन्
माइक्रोफोन	मैक्रोफोण्	फैक्ट्री	फाक्टरि
एसोसियेशन	असोसियेषम्	कम्यूनिस्ट	कम्यूणिस्ट
रोड	रोड	आफर	ओफर
कमीशन	कमीषन्	इंग्लिश	इंग्लीष
मेजर	मेजर	सीट	सीट
केस	केस	सेट	सेट
गवंनमेंट	गवण्मेंट	कालेज	कोलेजु
टोन	टोन	ट्यूब	ट्यूब
स्टाफ	स्टाफ		

मार्च, सिग्नल, हेल्थ, होटल, रिसीवर, रिपोर्ट, चर्च, फोटो, मानेजर, मीडियम, नये स्काच आदि अनेक शब्द हैं।

हिन्दी-कन्नड़

कर्नाटक राज्य में मुख्यतः बोली जाने वाली भाषा 'कन्नड' है। प्राचीनता की दृष्टि से तमिल के बाद कन्नड़ आती है। कर्नाटक राज्य के अतिरिक्त

पड़ोसी राज्यों में यह भाषा बोली जाती है। इसके पश्चिमोत्तर में महाराष्ट्र है, इस प्रकार उत्तर में आर्य भाषा का क्षेत्र है और दक्षिण तथा पूर्व में द्रविड़ परिवार की भाषाएँ हैं। यही कारण है कि आर्य भाषाओं का कन्नड़ पर व्यापक प्रभाव पड़ा है। सुख-समृद्धि से भरपूर इस राज्य का जनजीवन यहाँ के साहित्य में प्रतिबिम्बित होता है।

कन्नड़ का प्रारम्भिक रूप पाँचवीं शताब्दी में मिलता है। पाँचवीं शताब्दी के हल्मिडी शिलालेख के अतिरिक्त चिकमंगलूर तथा कडूर के शिलालेखों में इस भाषा के प्रारम्भिक संकेत मिलते हैं। गुणाढ्य की बृहत्कथा में इसका उल्लेख है। अति प्राचीन कन्नड़ शिलालेखों में है। जैन महापुरुषों की कथाओं व गद्य रचनाओं में कन्नड़ में प्राचीन रूप मिलता है। संस्कृत के अतिरिक्त प्राकृत अपभ्रंश-कन्नड़ के पंडित जैन विद्वानों ने अनेक रचनाएँ प्रस्तुत कीं। गद्य तथा पद्य से मिश्रित चंपू शैली का भी विकास इस युग में हुआ। संस्कृत मिश्रित कन्नड़ के कारण संस्कृत का व्यापक प्रभाव कन्नड़ पर पड़ा। जैन मत के प्रभाव के कारण प्राकृत तथा अपभ्रंश के शब्द भी बड़ी मात्रा में कन्नड़ में घुल-मिल गये।

हिन्दी-कन्नड़ की समान शब्दावली पर शिक्षा मंत्रालय तथा केन्द्रीय भारतीय भाषा संस्थान, मैसूर की शब्दसूचियों के अतिरिक्त इस दिशा में दो शोधकार्य महत्त्वपूर्ण हैं—

१. हिन्दी-कन्नड़ की समान शब्दावली
—डॉ० सोमशेखर 'सोम', अलीगढ़ मु० विश्वविद्यालय।

२. हिन्दी और कन्नड़ भाषाओं की शब्दावली का तुलनात्मक अध्ययन
—डॉ० निजलिंगप्पा, बंगलौर विश्वविद्यालय।

डॉ० सोम ने कन्नड़ साहित्य में प्रयुक्त शब्दावली को आधार बनाया। समान शब्दों की संख्या सहस्रों में है. यह बात दूसरी है कि समान शब्दों में भाषा की प्रवृत्ति के अनुकूल वर्तनी भेद हो जाता है—

हिन्दी रूप		कन्नड़ रूप
माता	—	माते
स्मरण	—	स्मरणे
मामूली	—	मामूलु
इलाका	—	इलाखे

समान शब्दावली में साधारण, संतोष जैसे तत्सम तथा दस्तावेजु, कालेजु, आफीसु, जमीनु आदि विदेशी शब्दों की संख्या अत्यधिक है।

कन्नड़ शब्दकोश का निर्माण किटेल ने किया। यह शब्दकोश आज भी भारतीय भाषाओं का मानदंड बनी हुई है। किटेल ने सन् १८७२ में केशिराज कृत 'शब्दमणि दर्पण' तथा नागवर्मा विरचित 'छंदोबुधि' जैसे प्राचीन ग्रन्थों का सम्पादन किया।

अनेक समान शब्द ऐसे भी हैं जो भिन्न अर्थ में प्रयुक्त होते हैं अतएव इस शब्दों के प्रयोग में सावधानी रखनी चाहिए।

		कन्नड़ में अर्थ
आलोचना	—	सोचना, विचार करना
अपेक्षा	—	इच्छा
अभिमान	—	प्रेम
अपवाद	—	आरोप, इल्जाम
उद्योग	—	नौकरी
अवसर	—	उतावलापन
संसार	—	परिवार
अवस्था	—	तकलीफ
भावना	—	अभिप्राय
विज्ञापन	—	प्रार्थना

कुछ ऐसे भी शब्द हैं जिनमें कन्नड़ में नया अर्थ भी जुड़ गया है—

		नया जुड़ा अर्थ
आरम्भ	(शुरू करना)	कृषि (आरम्भगार) (कृषक)
पंथ	(मार्ग)	होड़
सत्य	(सच)	सौगंध
तामस	(तमोगुण युक्त)	सुस्ती, आलसी

कहीं-कहीं मुख्य अर्थ मात्र कोश तक रह गया; नवीन अर्थ लोक प्रचलित हो गया—

			नवीन अर्थ
विकट	भयंकर	भयंकर,	विनोदी
निमंत्रण	न्योता	न्योता,	श्राद्ध के लिए न्योता
मासिक	माहका	मासिक,	श्राद्ध माह का
शोभा	कांति	कांति,	एक रोग
कृषि	खेती	खेती,	परिश्रम
संकीर्ण	संकुचित	संकीर्ण,	बिखरा हुआ
स्वामी	मालिक	स्वामी,	संन्यासी

कन्नड़ के प्राचीन व्याकरण शब्दमणि दर्पण (केशिराज) ने संस्कृत तथा कन्नड़ के समान शब्दों की सूची दी है। ऐसे शब्दों को 'सम संस्कृत' कहा गया है।

हिन्दी प्रचार संविधान शब्दों का प्रचलन, आकाशवाणी दूरदर्शन आदि के माध्यम से अनेक समान शब्दों का प्रचलन बढ़ा है।

वाक्य में पदक्रम

सभी भारतीय भाषाओं-आर्य, द्रविड़ तथा मुंडा में कर्ता-कर्म-क्रिया का पदक्रम मिलता है।

'पदक्रम' पदबंध के अंतर्गत भी निश्चित होता है। सामान्यतः हिन्दी में विशेषण संज्ञा से पूर्व आता है, जैसे—बड़ा लड़का, लंबा लड़का, सुन्दर लड़का, न कि—

लड़का बड़ा, लड़का लंबा, लड़का सुन्दर।

शैली-भेद से अवश्य कोई भी क्रम हो सकता है, पर सहज क्रम यही है कि विशेषण पहले, विशेष्य बाद में। सारी भारतीय भाषाओं में यही क्रम मिलता है।

भारतीय आर्य और द्रविड़ भाषाएँ व मणिपुरी में परसर्ग की व्यवस्था है, जैसे—

मेरे निवास में
मेरे निवास की ओर
मेरे निवास के बाहर

टिप्पणी : अंग्रेजी तथा फारसी भाषा में परसर्ग के स्थान पर पूर्वसर्ग मिलता है, जैसे—

in the residence, in the house. (अंग्रेजी)
दर असल [हिन्दी—असल में] (फ़ारसी)
ता जिन्दगी [हिन्दी—जिन्दगी तक] (फारसी)

क्रिया पदबन्धों में मुख्य क्रिया पहले और सहायक क्रिया बाद में आती है जबकि अंग्रेजी में मुख्य क्रिया सबसे बाद में—

किया गया। (हिन्दी)
has been done. (अंग्रेजी)

वाक्य में प्रयुक्त पद के लिंग

लिंग व्यवस्था भारतीय भाषाओं में भिन्न-भिन्न है।

संस्कृत में तीन लिंग-पुंल्लिग, स्त्रीलिंग, नपुंसक लिंग हैं जबकि भारतीय भाषाओं में भिन्नता है। यह भिन्नता कई भाषाओं में भिन्न प्रकार की है—

द्रविड़ भाषाएँ — मानव-पुंल्लिग तथा स्त्रीलिंग
शेष-प्राणिवाचक, वस्तुवाचक, भाववाचक } नपुंसक लिंग

हिन्दी-पंजाबी — मात्र दो लिंग हैं।

गुजराती-मराठी — तीनलिंग पुंल्लिग तथा स्त्रीलिंग
शेष-प्राणि/वस्तु-भाववाचक-नपुंसक लिंग

बंगला-असमिया — लिंग के कारण विशेषण तथा क्रिया में परिवर्तन नहीं होता।

क्रियापद में रंजक क्रिया

भारतीय भाषाओं की एक और समान मुख्य विशेषता **'रंजक क्रिया'** का होना है।

'कर्' (करना) मूल धातु है जिससे 'कर' क्रियारूप बनता है। इस मूल क्रिया से ही अनेक क्रियारूप रंजक क्रिया के साथ बनते हैं—

कर लेना, **कर** देना, **कर** डालना, **कर** रखना, **कर** जाना आदि।

'रंजक क्रिया' का प्रयोग समस्त भारतीय भाषाओं में समान रूप से मिलता है। अनेक विद्वानों के मत के अनुसार रंजक क्रियाएँ मूलतः द्रविड़ भाषाओं में प्रयुक्त होती थीं जो कालान्तर में सभी आधुनिक आर्य भाषाओं में प्रयोग की जाने लगीं। संयुक्त क्रिया की पहली मूल क्रिया होती है और दूसरी रंजक (कोई अर्थ सम्बन्धी विशेषता)।

क्रियापद में पूर्वकालिक कृदंत 'कर'

लिख **कर**, जा **कर**, खा **कर**, सो **कर** आदि क्रिया पदबन्धों में 'कर' पूर्वकालिक कृदन्त है। 'कर' के साथ 'के' का प्रयोग भी मिलता है, जैसे—

लिख **कर**, लिख **कर के**, लिख के

जा **कर**, जा **कर के**, जा के

रेखांकित पद ही मानक हैं, पर 'कर' के साथ 'कर' न लग कर मात्र 'के' का प्रयोग किया जाता है; जैसे—कर के (काम **कर के**)

क्रिया पदों के प्रेरणार्थक रूप

प्रेरणार्थक क्रिया रूप हिन्दी (आधुनिक आर्य भाषाएँ) तथा तेलुगु (द्रविड़ भाषाएँ) में समान है—

	हिन्दी	**तेलुगु**
मूलरूप	करना	चेयु
प्रेरणार्थक	रूप कराना	चेयियु

कभी-कभी दो प्रेरणार्थक रूप भी मिलते हैं; जैसे, लिखना-लिखाना-लिखवाना; पढ़ना-पढ़ाना-पढ़वाना आदि की दूसरी तरह—

मूल रूप	कटना	नरुक बडु
प्रेरणार्थक (प्रथम) रूप	काटना	नरुकु
प्रेरणार्थक (द्वितीय) रूप	कटवाना	नरुकिचु

हिन्दी में क्रियार्थक रूप '—ना' अंत में सर्वत्र विद्यमान रहता है और मध्य में स्वर-परिवर्तन होता रहता है साथ ही द्वितीय प्रेरणार्थक के मध्य में -व- का योग किया जाता है। अकर्मक से सकर्मक तथा प्रेरणार्थक रूप बनाने के लिए स्वर परिवर्तन भी होता है, कुटना-कूटना-कुटवाना। कूटना में 'कूट्' धातु स्वयं द्रविड़ परिवार से आई है— कुतु (तमिल), कुतुक (मलयाळम), कुट्टु (कन्नड), कोट्टु (तेलुगु), गुट (कोडगु) आदि।

शब्देतर समानता

भारतीय विशालता में सांस्कृतिक एकता का सूत्र विद्यमान है। भारतीय संस्कृति की यह ज्योति सर्वत्र है। लोकोक्तियाँ भी समान हैं। डॉ० सुनीति कुमार चाटुर्ज्या ने इस समानता की ओर संकेत करते हुए कहा था—

"भारत की संस्कृति, भारत का जीवन एक ओर अखंड है, इसके प्रान्तिक रूप-भेदों में चाहे जितना ही बाहरी पार्थक्य दिखाई दे। विभिन्न प्रान्तों के प्रवादों की समता और इनकी समान दृष्टिभंगी से यह बात साबित होती है।"

एक सूत्र में बाँधने का काम संस्कृत करती है। इस तथ्य की ओर बार-बार संकेत किया गया है। संस्कृत की सामग्री ही भारतीय भाषाओं में प्रकारान्तर से प्राप्त है अथवा अनूदित कर ली गई है।

लोकोक्तियाँ लोक में जन्म लेती हैं। ग्रामीण लोक साहित्य में एक ही भावना परिव्याप्त है। लोकोक्तियाँ विभिन्न भाषाओं में रूप में पृथक् होते हुए भी अंतरंग रूप से समान हैं। यहाँ पर उदाहरणार्थ कुछ लोकोक्तियों को लिया जा सकता है—

हिन्दी	अंधों में काना राजा[1]।	जैसा देश वैसा भेष[2]।
डोगरी	अन्नें च काना राजा।	जैसा देश ऐसा भेस।
तमिल	आलै इल्ला ऊरिल इलथपू सक्करै।	ऊरूइन ओन्तु वाळ।
सिन्धी	अंधनि में काणों राजा।	जहड़ो देसु तहड़ो वेसु।
मराठी	आंध यांत कांणां राजा।	देश तसा वेश।

एक और बहुप्रचलित लोकोक्ति को लिया जा सकता है—

हिन्दी अपने मरे बिना स्वर्ग नहीं दीखता।

गुजराती आप मुवा बिना स्वर्ग न जवाय।

---

१. यही हिन्दी की उपभाषाओं में थोड़े बहुत अन्तर के साथ है : अन्हरा में काना राजा (भोजपुरी), आंधा में कांणी राजा (मेवाड़ी), अन्हरा में कान्हा राजा (मैथिली), आंधों में काणों राय (राज०) अदरन में काने राजा (बुंदेली), अंधा म काणों राजा (निमाणी)।

२. जनु तेस, तनु भेस (गढ़वाली), जैसो देस, तैसो भेस (बुंदेली) अइसन देस ओइसन भेख (भोजपुरी), देस जिसो भेस (राज०)।

मराठी	आपण मेल्यावांचून स्वर्ग दिसत नाहीं।
तमिल	सुम्मा किडैक्कुमा सौणाचलम पादम।
मारवाड़ी	आप मरियां बिनां स्वर्ग कठै।
बुंदेली	अपने मरे बिना सरग नई दिखात।
डोगरी	आपूँ मोए बगैर सुरघ नि जान होन्दा।
गढ़वाली	अफूँ मरयाँ बिना स्वर्ग नि दिखिद।

अनेक लोकोक्तियाँ बंगाल से तमिलनाडु तक प्रचलन में हैं। उत्तर, मध्य, पश्चिम तथा दक्षिण भारत में समान भाव में प्रचलित अनेक लोकोक्तियाँ। भारतीय लोकोक्ति कोश सामान्य जन में व्याप्त एकता की भावना को व्यक्त करने में समर्थ है।

यही समानता प्रयोग स्तर पर भी है—

	१	२
हिन्दी	कुत्ते की पूँछ	मेरे हाथ
पंजाबी	कुत्ते दी पूँश	मेरे हत्थ
गुजराती	कुतरानी पूँछड़ी	मारा हाथ
मराठी	कुत्र्याची शेपटी	माझे हात
बंगला	कुकुरटार लैज	आमार हात (हाथ) दुटो
असमिया	कुकुरटोर नेज	मोर हात दुखोन

	३	४
हिन्दी	बहुत सी औरतें	तीन औरतें
पंजाबी	केत ओरताँ	तीन्न औरताँ
गुजराती	बहु स्त्री	त्रण स्त्री
मराठी	पुष्कळ बाया (बायका)	तीन बाया (बायका)
बंगला	अनेक स्त्री लोक	तिन्हे स्त्री लोक
असमिया	बहुत माइकिमनुह	तिनिजमी माइकिमनुह

	५	६
हिन्दी	दो पत्थर	मेरा सिर
पंजाबी	दो पत्थर	मेरा सीर
गुजराती	बे पथरा	मरुन माथुन
मराठी	दोन दगड	मज्हे डोक
बंगला	दुतो पत् (ह) र	आमार मत् (ह) (अ)
असमिया	दूसा खिल (द्वे थिले)	मोर मूर्तो

	७	८
हिन्दी	दूसरा आदमी	तुम्हारा कान
पंजाबी	दूसरा आदमी	तेरा कन्न
गुजराती	बीजो माणस	तारो कान
मराठी	दूसरा माणूस	तुझा कान
बंगला	आर ऐक्टा लोक	तोमार कान
असमिया	आन एटा मनुह	तोमार कानखॉन

इसी तथ्य की ओर संकेत कुछ वाक्यों को लेकर किया जा सकता है:—

१.	**हिन्दी**	—	मेरे पास एक कुत्ता है।
	पंजाबी	—	मेरे कोल कूत्ता वै।
	गुजराती	—	मारे कुतरो छे।
	मराठी	—	माझा एक कुत्रा आहे।
	बंगला	—	आमार एक्टा कुकुर आछे।
	असमिया	—	मोर एटा कुकुर आसे।
२.	**हिन्दी**	—	यह किसका चाकू है ?
	पंजाबी	—	ए किसदा चाक्कु वै ?
	गुजराती	—	आ कोनी छरी छे ?
	मराठी	—	ही कोणाची सुरी आहे ?
	बंगला	—	एटा कार छुरी ?
	असमिया	—	एखन कार कटारी ?

३.	**हिन्दी**	—	लड़का मोटा है।
	पंजाबी	—	मुंडा मोट्टा वै।
	गुजराती	—	छोकरो जडो छे।
	मराठी	—	मुलगा लट्ठ आहे।
	बंगला	—	छेलेटा मोटा।
	असमिया	—	लुरटो खकत।
४.	**हिन्दी**	—	मेरा घर अच्छा है।
	पंजाबी	—	मेरा केर चंगा वै।
	गुजराती	—	मारुं घर सारुं छे।
	मराठी	—	माझे घर चांगले आहे।
	बंगला	—	आमार बाडी भालो।
	असमिया	—	मोर घरटो भाल।

पूर्व तथा पश्चिम की एक-एक भाषा को लेकर वाक्य स्तर पर कई वाक्यों के उदाहरण लेकर इस समान तत्त्व को देखा जा सकता है—

हिन्दी	**उड़िया**	**मराठी**
माफ कीजिए।	क्षमा करिबे।	क्षमा करा।
नमस्ते।	नमस्कारा।	नमस्कार।
आपका नाम क्या है?	आपणं नाम कँअण?	आपलें नांव काय?
यहाँ से स्टेशन कितनी दूर है?	स्टेशन एठारू केते दूरण?	इथून स्टेशन किती दूर आहे?
आप कहाँ रहते हैं?	आपण केउँ टारे रहन्ति?	आपण कुठे राहता?
मैं ठीक हूँ।	मुँ ठिक अछि।	मी ठीक आहे।
आपको यहाँ क्या मिलता है?	आपणं कर एठारे कअण मिलिपारे?	आपल्याकडे काय मिलते?
मेरे यहाँ चावल मिलता है।	आमार एठारे भातअ मिले।	माझ्याकडे तांदूल मिलतात।
सामान सस्ता कहाँ मिलेगा।	जिनिसअ सस्तारे के ऊँठि मिलिबअ्?	जेवणाचे पैसे किती?
पानी मिलेगा?	पाणि मिलिब?	पाणी मिलेल काय?
आपको कष्ट दिया।	आपणं कु कष्ट देति	आपल्याला त्रास दिला।
अच्छा अब चलते हैं।	अच्छा एवे आउछुँ।	अच्छा, आम्ही जातो।

इसी प्रकार का प्रयास जनगणना आयुक्त[1] कलकत्ता द्वारा भी किया गया जिसमें काफी परिश्रम से सभी भारतीय भाषाओं में निम्नलिखित सामग्री समानान्तर रूप से तत्संबंधी भाषा की लिपि व अंतर्राष्ट्रीय लिपि (साथ में अंग्रेजी अनुवाद) में प्रस्तुत की गई है। यह इस दिशा में सफल प्रयास हुआ है। ११०० शब्द, ५७६ असम्बद्ध पाठ, ८२ सम्बद्ध वाक्य भविष्य में भारतीय भाषा संस्थान, मैसूर के तत्त्वावधान में भी यह कार्य और अधिक विशाल रूप में हो सके।

वाक्य संरचना लगभग समान है और स्वरलहर के अंतर से प्रश्नवाचक भी बन जाता है—

हिन्दी	—	वह आया है।	वह आया है?
गुजराती	—	ते आव्यो छे।	ते आव्यो छे?
तेलुगु	—	वाड़ु वच्चिनाड़ु।	वाड़ु वच्चिनाडा।
कन्नड	—	अवनु वन्दनु।	अवनु वन्दने?
तमिल	—	अवन वन्दान्।	अवन वन्दना?

स्वरलहर का स्वरूप—

सरल वाक्य — — — —,

प्रश्नवाचक वाक्य — — — /

(गुरुवर डॉ० विश्वनाथ प्रसाद जी से प्राप्त)

---

1. Grammatical Sketches of Indian Languages with Comparative Vocabulary and Texts R. C. Nigam part I & II Census of India 1971, Monograph No. 2 P. 563.

नव वर्ष की शुभकामनाएँ	nav varṣ kī śubhkāmanāẽ	Hindi
नवीन वर्षाच्या शुभेच्छा	navīn varṣācyā śubhēcchā	Marathi
नूतन् वर्षाभिनंदनम्	nūtan varṣābhinandanam	Sanskrit
નવ વર્ષની શુભેચ્છા	नव वर्षनी शुभेच्छा	Gujrati
నూతన సంవత్సర శుభాకాంక్షలు	नूतन संवत्सर शुभाकांक्षलु	Telugu
புத்தாண்டு வாழ்த்துகள்	पुथ्याण्डु वाल्त्तुकळ्	Tamil
പുതുവർഷ ആശംസകൾ	पुतुवर्ष आशम्सकळ्	Malyalam
ਨਵ ਵਰਸ਼ ਦੀਆਂ ਸ਼ੁਭਕਾਮਨਾਵਾਂ	नव वर्ष दीआं शुभकामनावां	Punjabi
শুভ নববর্ষ	शुभ नववर्ष	Bengali
শুভ নৱবৰ্ষ	शुभ नववर्ष	Assamese
ಹೊಸವರ್ಷದ ಶುಭಾಶಯಗಳು	होसवर्षद शुभाशयगळु	Kannada
ନୂତନ ବର୍ଷର ଅଭିନନ୍ଦନ	नूतन बर्षर अभिनन्दन	Oriya
نؤو ؤری مبارک	नोव वरी मुबारख	Kashmiri
نیا سال مبارک	नया साल मुबारक	Urdu
نئين سال جُون واڌايون	नईं साल जूं वाधायूं	Sindhi

NEW YEAR'S GREETINGS

(प्रो० ओंकारनाथ कौल के सौजन्य से प्राप्त)

अन्त में इस विद्वत्-मंडली के समक्ष में मैं निवेदन करना चाहता हूँ कि हिन्दी भारतीय भाषाओं से भरपूर लेते हुए ऐसा रूप ग्रहण करेगी जो अँग्रेजी के 'बेसिक' (ब्रिटिश, अमेरिकन, साइंटीफिक, इंडस्ट्रियल, कामर्शियल व कल्चरल) और डॉ० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या की दृष्टि से अखिल भारतीय भाषा के रूप में 'बेसिक हिन्दी' के रूप में मान्य होगी—

B—Bhartiya	—	भारतीय
A—Adhunik	—	आधुनिक
S—Sanskritmulak	—	संस्कृतमूलक
I—Islami	—	इस्लामी (अरबी-फारसी के उन शब्दों को जो प्राकृतिक बन गये हैं, प्रयोग में लाने वाली)
C—Chaltu	—	चालू-चलतू

जिस प्रकार सभी देवों को एकसाथ नमस्कार करने के लिए केशव को नमस्कार कर दिया जाता है या कहिए कि केशव को किया गया नमस्कार सब देवों को पहुँच जाता है,

(सर्वदेवनमस्कारः केशवं प्रतिगच्छति ।)

उसी प्रकार उसी लय में डॉ० चाटुर्ज्या ने जोड़ा—

'सर्वभाषा समवायो हैन्दवीम् प्रतिगच्छति', अर्थात् सब भाषाओं का समुदाय अन्त में हिन्दी-सागर में विलीन हो रहा है ।

यही बात प्रकारान्तर से गुजराती के सुप्रसिद्ध विद्वान्, राजनेता श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी ने संस्कृत विश्व परिषद् के (सन् १६५५) अधिवेशन में कही जिससे हम सभी सहमत होंगे—

> "हिन्दी का संवर्द्धन भारत की अप्रतिहत अग्रगामिता से गुँथा हुआ है । हिन्दी और गुजराती से हमारे राष्ट्रीय जीवन का ताना-बाना पुरेगा । हिन्दी के विधिवत् प्रयोग से निस्सन्देह गुजराती संस्कृत जैसी अभिव्यंजना शक्ति, बंगाली का संस्वरित मार्दव तथा तमिल जैसी परिपक्वता प्राप्त करेगी और साथ ही साथ अपनी मौलिक सादगी और लगन को भी बढ़ा सकेगी ।"

———

भारत की प्रमुख भाषाओं की स्थिति

१.	२.	३.	४.
क्रमसंख्या	नाम भाषा	बोलने वालों की संख्या	कुल जनसंख्या का प्रतिशत
१.	हिन्दी	२६,४२,८८,८५८	३९.९४
२.	तेलुगु	५,४२,२६,२२७	८.२०
३.	बंगाली	५,१५,०३,०८५	७.७९
४.	मराठी	४,९६,२४,८४७	७.५०
५.	तमिष्	४,४७,३०,३८९	६.७६
६.	उर्दू	३,५३,२३,४८१	५.३४
७.	गुजराती	३,३१,८९,०३९	५.०२
८.	कन्नड	२,६८,८७,८३७	४.०६
९.	मलयालम	२,५९,५२,९६६	३.९२
१०.	उड़िया	२,२८,८१,०५३	३.४६
११.	पंजाबी	१,८५,८८,४००	२.८१
१२.	कश्मीरी	३१,७४,६८४	०.४८
१३.	सिन्धी	१९,४६,२७८	०.२९
१४.	असमिया	७०,५२५	०.०१
१५.	संस्कृत	२,९४६	—

[१९८१ की जनगणना पर आधारित]

असम में जनगणना नहीं हुई।

शुद्धिपत्र

पृष्ठ/पंक्ति-संख्या	अशुद्ध	शुद्ध रूप
१.१७	पंडित	मंडित
२.१३	गोवा	ग्रीवा
४.४	ईश्वरदेव	शंकरदेव
६.२५	की प्रेरित	को प्रेरित
७.२	पढ़	पद
७.१८	मालवेग	सालवेग
७.३१	कृष्णादास	कृष्णदास
१०.३०	मान	भान
११.१०	निश्चित	मिश्रित
११.११	हुका	कहा
११.२७	मानक	मानक
१३.३	सुस्थिर	सुस्थिर
१४.१६	आले	आले
१५.६	दो अरब	दोजख
१५.१७	मालण, अरबो	भालण, अखो
१६.२८	ख्यान	ख्याल
१९.१	भाषा का स्वरूप	भाषा के स्वरूप
१९.१७	मथुरा	मदुरा—मदुरै
१९.२७	भान	जान
२०.३	शब्द है	संस्कृत के शब्द हैं
२१.१६	1604 (१६०४)	१६८४
२३.१८	fevour	favour
२५.७	बुद्धि	वृद्धि
२५.११	११२	९९२
२९.१५	अब के कोल	अब कोल
३०.१२	बोली	बोड़ो
३०.१३	बौद्धों	बोडो
३०.१९	संख्या लिया	संख्या को लिया
३०.२५	बढ़ा	बढ़

३३.२३	राज	राज्य
४२.१७	लृ, ऋ	लृ, ॠ
४२.१८	ता	तथा
४२.२७	मुरत	सुरत
४४.२	नथा	तथा
४४.२४	[क्]	[क्ऱ]
५०.१३	प्रकार का	प्रकार का कार्य
५८.६	Pomphlets	Pamphlets
५८.१४	much	such
७१.१४	भाषा	भाषण
७३.३	हुआ है	हुए हैं
७५.६	शब्दों	शब्दों में
७८.१५	पाथ	पाक
७६.५	चम्बा	चम्बा में
७६.१०	सिद्धेश्वरी वर्मा	सिद्धेश्वर वर्मा
७६.११	सीमन्त	सीमान्त
८०.१८	राहुल जी	राहुल जी ने
८१.७	कौरवी की	कौरवी को
८२.३	कफतल	मकतल
८५.८	कॉलवेल	कॉडवेल
८५.२२	छवि	ध्वनि
६०.१३	अध्याय	अध्ययन
६३.३	पाठशाला	पाठमाला
६३.८	है।	है कि
६३.२८	पाठशालाएँ	पाठमालाएँ
१०४.१४	संविधान	संविधान के
१०८.२०,२३	केत ओरतां, तिन्हे	बोत ओरतां, तिन्टे
१०६.७	दूसा	दूता
११०.२०	टारे	ठारे
११०.३०	आउछुं	जाउछुं
१११.७	हो सके	हो सकेगा।

● ●